सिद्धयोग

2017

संस्थापक : योगयोगेश्वर
अनन्तश्री चन्द्रमोहनजी महाराज

योग सिद्धान्त एवं आध्यात्म का
प्रतिपादक मासिक

वर्ष : 49, अंक : 11-12
फरवरी-मार्च

एक प्रति : रू.20
द्विवार्षिक : रू. 360

प्रकाशन तिथि : 01.03.2017

श्री सिद्धगुफा प्रकाशन सवाँई-283202 (आगरा) उ.प्र

न हन्यते हन्यमाने शरीरे

न जायते म्रियते वा कदाचिन्नायं भूत्वा भविता वा न भूयः।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे।।
–गीता 2/20

यह आत्मा किसी काल में भी न तो जन्मता है और न मरता ही है तथा न यह उत्पन्न होकर फिर होने वाला ही है, क्योंकि यह अजन्मा, नित्य, सनातन और पुरातन है, शरीर के मारे जाने पर भी यह नहीं मारा जाता।

◆ ◆ ◆

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः।।
– गीता 2/23

इस आत्मा को शस्त्र नहीं काट सकते, इसको आग नहीं जला सकती, इसको जल नहीं गला सकता और वायु नहीं सुखा सकती।

◆ ◆ ◆

सिद्धयोग

योग सिद्धान्तों का प्रतिपादक मासिक–पत्र

श्री सिद्धगुफा योग प्रशिक्षण केन्द्र, सवांई (एत्मादपुर) आगरा

वर्ष 49
अंक 11

फरवरी
मार्च
2017

ध्यायं ध्यायं यदिह परमं ब्रह्म शुद्ध स्वभावम्
मर्त्योमृत्योर्मुख विवरतो, मुक्तिमाप्नोति सद्यः।
तत्राप्यर्थान् बहुतर विषदान् योगशास्त्रोपदेशान्
कल्याणां भवतु महतां सिद्धये सिद्धयोगः।।

बड़ा आश्चर्य है !

व्याघ्रीव तिष्ठति जरा परितर्जयन्ती।
रोगाश्च शत्रव इव प्रहरन्ति देहम्।।
आयुः परिस्त्रवति भिन्नघटादिवाम्भो।
लोकस्तथाप्यहितमाचरतीति चित्रम्।।

अर्थात्

बुढ़ापा व्याघ्री की तरह तर्जना देता हुआ खड़ा है, रोग शत्रु की तरह शरीर पर प्रहार करते हैं। कच्चे घट से जिस प्रकार पानी स्त्रीवत हो जाता है उसी प्रकार आयु दिन–दिन क्षीण हो रही है। तो भी लोग अपने–अपने अहित आचरण में लगे हुए हैं, यह बड़े आश्चर्य की बात है।

SIDDHYOG
HINDI MONTHLY

संस्थापक :
योग–योगेश्वर अनन्तश्री चन्द्रमोहन जी महाराज

सम्पादक :
आचार्य (डा.) दासलाल ब्रह्मचारी

संयुक्त सम्पादक :
डॉ. विजय सिंह

प्रबन्ध सम्पादक :
समस्त योग प्रचार मण्डलों के अध्यक्ष एवं गुरु भाई–बहिन

इस अंक में ...

1.	विशेष लेख – योगयोगेश्वर अनन्तश्री चन्द्रमोहनजी महाराज	3
2.	सम्पादकीय	8
3.	श्री मद्भागवत में योग–परिचर्चा– डॉ. विजय सिंह	11
4.	आत्मचिन्तन– प्रो. ऋषिराम शर्मा	14
5.	पार करो मेरा बेड़ा– जगदीश राए बंसल	16
6.	योग दर्शन	17
7.	श्री मद्भागवत् में विशुद्ध भक्ति– हेमराज चोपड़ा	22
8.	दतिया में सिद्धयोग शिविर	27
9.	अनिकेत स्थिरमति– कृष्ण कुमार	29
10.	प्रयागराज का वार्षिक माघ मेला सम्पन्न	33
11.	सिद्धयोग आश्रम गंगापुर सिटी में विशाल योग शिविर	34
12.	प्रशंसा और निन्दा दोनों से बचना अच्छा है	36
13.	पावन प्राकट्य दिवस	39
14.	योग–आसन	40

एक प्रति	: रु. 20.00
वार्षिक शुल्क	: रु. 180.00
द्विवार्षिक	: रु. 360.00
आजीवन	: रु.1000.00

विशेष लेख

संकीर्तन मन की एकाग्रता का ठोस साधन

योगीराज अनन्तश्री चन्द्रमोहन जी महाराज

ध्वनि भी मन की एकाग्रता का कारण बन सकती है। ''नास्ति नाद सदृशो लयः'' के नियमानुसार नाद समाधि का एक ठोस साधन है। अभी संकीर्तन हो रहा था कुछ बच्चों की आँखें बन्द थीं और संकीर्तन बोल रहे थे कुछ बच्चे आँखें खोलकर बैठे हुए थे। मेरा यह अनुभव है कि यदि ठीक ढंग से ध्वनि उठाकर के संकीर्तन किया जाये तो इससे बहुत जल्दी मन की एकाग्रता हो जाया करती है। जहाँ–जहाँ ऐसा हुआ वहाँ एकाग्रता लोगों की बनी। जिस समय मैंने पहले पहल संवाई आश्रम में योग प्रचार करना आरम्भ किया उसमें जो व्याख्यान का क्रम था यह बहुत बाद में शुरू हुआ किन्तु पहले ध्वन्यात्मक संकीर्तन हुआ करता था। मैंने एक दिन देखा इस प्रकार से संकीर्तन से चालीस व्यक्ति समाधिस्थ थे जिनके मनों के अन्दर एकाग्रता थी जो काफी लम्बे समय के बाद ध्यान से उठे। यहाँ तुम देख रहे थे एक देवी, संकीर्तन करते–करते गिर पड़ी थी। पास वालों के उठाने पर भी वह नहीं उठी। जैसा कि मैंने तुम्हें अभी बताया कि योग प्रचार के आरम्भ के दिनों में व्याख्यान अधिक नहीं दिया करते थे किन्तु साधकों के जीवन को यथार्थ रूप से बनाने की चेष्टा करते थे। जिला करनाल में कुराना गाँव में हमने संकीर्तन कराना आरम्भ किया। यह गाँव मेरी जन्मभूमि अलुपुर के पास में ही है। उस समय के संकीर्तन में भी लोगों के मनों में बहुत एकाग्रतायें प्राप्त हुई। कुराने में भी जैसे संवाई गुफा में संकीर्तन में लोग बेहोश हो जाया करते थे उसी प्रकार से लोग काफी संख्या में कीर्तन करते–करते बेहोश हो जाया करते थे और एकदम ध्यानस्थ हो जाया करते थे। उनमें कुछ लोग आज भी हैं। उसी संकीर्तन के प्रभाव से उनकी ध्यान स्थिति बढ़ती चली गई। उस संकीर्तन का प्रभाव यहाँ तक बढ़ा कि पशुओं पर भी उसका प्रभाव होने लगा। कुराने में हमारे मास्टर हरि प्रसाद इस बात को जानते हैं। वहाँ कुराने में आश्रम की बाहरी दीवार के साथ ही किसान लोग बैलों से कोल्हू पिराया करते थे और गन्ने का रस निकाल कर गुड़ बनाया

करते थे। आज तो इस प्रकार का रिवाज नहीं रहा है। वहाँ एक किसान के कोल्हू पिराने की बारी उसी समय आती थी जब हमारा संकीर्तन चलता था। संकीर्तन की ध्वनि के प्रभाव से उसका बैल खड़ा हो जाता था उसकी आँखें ऊपर चढ़ जाती थीं और मारने पीटने पर भी वह आगे नहीं बढ़ता था। उस किसान ने मुझ से आकर कहा कि आप यह **''नमामी शम्भो''** बन्द कर दें। मैंने कहा—क्यों **बन्द कर दें**? वह कहने लगा—हमारा बैल ध्वनि सुनते ही खड़ा हो जाता है और हम अपनी बारी का लाभ उठा नहीं पाते। हमने उससे कहा—भई! तू अपनी बारी दिन में ले ले। हम अपना संकीर्तन उसी समय करेंगे जिस समय हम करते हैं। हम इसे बन्द नहीं करेंगे। उस समय आश्रम की दीवार से लगे घरों के मेहतरों के लड़के भी संकीर्तन बोला करते थे और उनके मनों में भी एकाग्रता पैदा हुई। एक मेहतर के लड़के को इसी संकीर्तन के प्रभाव से दिव्यानुभूतियाँ जारी हो गई। उस एकाग्रता में उसने अनुभव किया कि अमुक अशुभ कर्म के कारण मुझे मेहतरों के घर में जन्म लेना पड़ा है उसे यह भी ज्ञान हो गया कि उसका यह शरीर कितने दिन और रहेगा। उसने अपने अनुभव की बात औरों से भी कही। उसने बताया कि आज से उन्नीसवें दिन मेरा यह शरीर छूट जायेगा और अमुक गाँव में एक ब्राह्मण के घर में मेरा जन्म होगा। उसकी बात पर किसी ने विश्वास नहीं किया। अन्त में उन्नीसवें दिन उसने कहा—आज मैं अपने इस शरीर को छोड़ दूँगा। गुरु जी तो शायद हमारे घर में आयेंगे नहीं तुम हमारे मास्टर जी (हर प्रसाद) जो हमें पढ़ाया करते हैं उनको यहाँ बुला लाओ। घर वाले मास्टर हर प्रसाद को घर बुला ले गये। उसने मास्टर हर प्रसाद को बताया—अब मैं दो चार घण्टे का मेहमान हूँ। उसके बाद मैं अपने इस शरीर को छोड़ दूँगा और अमुक गाँव में अमुक ब्राह्मण के घर मेरा जन्म होगा। पिछले जन्म के क्लिष्ट कर्म के कारण इस घर में आना पड़ा था। निश्चित समय पर उसने शरीर छोड़ दिया और जहाँ उस लड़के ने बताया था वहाँ उस ब्राह्मण के घर एक वर्ष बाद एक लड़के ने जन्म ले लिया। यह सब हमारे उस संकीर्तन का प्रभाव था जिससे उसे अगले पिछले जन्मों के संस्कारों का साक्षात्कार हो गया। अस्तु! मुझे अपने पहले के समय की लाहौर की बातें याद आ रही हैं। मेरी तो बार-बार भावना बनी रहती है कि मैं एक बार लाहौर जाकर अपने पुराने स्थानों को देख आऊँ। लाहौर में हमारा तीन स्थान पर आश्रम रहा। सबसे पहले परीमहल में रहा। इसके बाद कृष्ण गली नं. 2 में रहा और रावी रोड पर मेहता हाफटोन कं. वालों ने जमीन दी थीं कुछ कमरे भी उन्होंने बनाकर दिये थे। एक बार अमृतसर में

हुकुम चन्द ने आकर कहा! महाराज जी! आप लाहौर में आश्रम क्यों नहीं बनाना चाहते। लाहौर तो बड़ी जगह है वहाँ पर ही आश्रम बनना चाहिए। आप को तो अपने जन्म स्थान की ममता है। श्री प्रभुजी ने हुकुम चन्द से कहा–हुकुमचन्द! यह जो तुम्हें रावी रोड पर जमीन मिली है यह भी एक दिन तुम्हारे पास नहीं रहेगी वहाँ आश्रम बनाना तो पैसा खराब करना ही है। श्री प्रभुजी ने भारत–पाकिस्तान बंटवारे की बात पहले ही बता दी थी। सब से पहले मेरे बड़े गुरु भाई ब्र. गोपालानन्द जी ने परीमहल आश्रम में योग प्रचार कराना आरम्भ किया।

संकीर्तन भी साथ–साथ चलता था। कृष्ण गली नं. 2 में जो आश्रम था उसका मालिक एक दिन ब्र. गोपालानन्द जी के पास आया कि हमारा वह मकान आप ले लें। हम दो तीन वर्ष तक तो कोई किराया नहीं लेंगे उसके बाद जो भी आप दे देंगे हम ले लिया करेंगे किन्तु एक बात यह है कि वहाँ जो भी रहता है मर जाता है। वहाँ भूत पत्थर बरसाते हैं इसलिए वहाँ कोई रहता नहीं है। ब्र. गोपालानन्द जी ने कहा–ठीक है हम उस मकान को ले लेंगे। ब्र. गोपालानन्द जी ने उस मकान में एक बड़ा सा हाल चुन लिया और उसमें छः महीने का अखण्ड संकीर्तन रख दिया। दिन रात भगवत् संकीर्तन चलता था। मैंने तुम्हें एक दिन पहले भी बताया था कि ब्र. गोपालानन्द जी के लिये वरदान था कि जहाँ भी संकीर्तन करायेंगे वहाँ लोगों को मन की एकाग्रता हो जायेगी। कृष्णा गली नं.2 में सब संकीर्तन चलता था उस समय मैंने एक दिन देखा सैकड़ों व्यक्ति बेहोश पड़े थे। तुम्हें यह सुन कर आश्चर्य होगा कि मुनि की रेती ऋषिकेश वाले स्वामी शिवानन्द जी भी उस संकीर्तन में बेसुध पड़े थे। एक और आर्य समाज के बहुत अच्छे प्रचारक स्वामी सत्यानन्द जी को भी हमने अपने संकीर्तन में बेहोश देखा था। स्वामी सत्यानन्द जी ने स्वामी दयानन्द की जीवनी **''दयानन्द प्रकाश''** लिखी है। इस प्रकार स्वामी जी की श्रद्धा बढ़ती गई और उन्होंने **'भक्ति प्रकाश'** नामक पुस्तक लिखी जिसमें उन्होंने राम नाम की महिमा लिखी। उन्होंने अपने उस पुस्तक में हमारे संकीर्तन का भी जिक्र किया है। ब्र. गोपालानन्द जी ने अखण्ड संकीर्तन करके उस कमरे को सिद्ध कर लिया और यह नियम बना दिया कि वहाँ केवल ध्यानाभ्यासी ही ध्यान में बैठें। पचीस तीस ध्यानाभ्यासी वहाँ बैठे रहा करते थे जिनका ध्यान वैसे नहीं लगता था वहाँ पर बैठने से लग जाता था। इस प्रकार बहुत से योगी ध्यानी वहाँ से बन गये। कृष्णा गली नं.2 के बाद हमारा आश्रम रावी रोड पर भी रहा किन्तु उस समय ब्र. गोपालानन्द जी का देहावसान हो गया। मैं जिस बात को बताना चाहता हूँ वह

यह कि संकीर्तन करते हुये जो ध्वनि उत्पन्न होती है उसकी उत्पत्ति उस एक तत्व से होती है।

एकतत्व का अभिप्राय सद्गुरु तत्व से है। कीर्तन करते-करते ही यदि ढंग से बोलोगे, लय और ध्वनि के साथ **''नमामि शम्भो, नमामि शम्भो''** का उच्चारण करोगे तो तुम देखोगे कि तुम्हारे अन्दर भी बेहोशी आने लगेगी। उस बेहोशी में एक तत्व रहता है। जिस प्रकार से अभी एक देवी बेहोश होकर गिर पड़ी थी उसी प्रकार तुम्हारी भी हालत हो जायेगी। हम अपने योग प्रचार कार्यक्रमों में श्री प्रभु जी के यौगिक चरित्र सुनवाया करते हैं तथा संकीर्तन का भी कार्यक्रम चलता है। यह मन की एकाग्रता का एक ठोस साधन बन जाता है यदि हम अपने मन को एकाग्र करके मन का उच्चारण करते हैं तो मन अवश्य एकाग्र हो जायेगा। हम श्री प्रभुजी का स्वरूप सामने क्यों रखते हैं। देखो! मद्रास की रानी पद्पावनी ने काम कोटि के शंकराचार्य स्वामी श्री चन्द्र शेखर सरस्वती के पास श्री प्रभुजी का चित्र लेकर उनसे पूछा था-यह चित्र कैसा है? उन्होंने कहा ये स्वयं नारायण है स्वयं नारायण हैं। फिर कहने लगे इस चित्र में हजारों को एक साथ मुक्ति देने की ताकत है। अर्थात् केवल मात्र प्रभु जी के स्वरूप को देखकर ध्यान में बैठ जाओगे तो एक तत्वाभ्यास हो जायेगा। इसके बाद जिनका मन ध्यान में न लगता हो उनका भी मन एकाग्र हो जायेगा। ध्यान बढ़ने लगेगा, आत्मिक शान्ति बढ़ती चली जायेगी। इसलिये हम तुम्हें कहा करते हैं कि श्री प्रभु जी के स्वरूप को सामने रखकर उनको प्रणाम करके ध्यान में बैठ जाया करो। बस! ऐसा करने से एकाग्रता आ जायेगी। तुम लोगों ने जहाँ से भी, जो भी मन्त्र लिया हो, उसे मेरुदण्ड को सीधा रखकर लगातार जपो! निरन्तर जाप करने से मन एकाग्र हो जाया करता है। मन्त्र बहुत अधिक लम्बा नहीं होना चाहिए। योगियों ने प्रणव मन्त्र **'ओम्'** के जाप को श्रेष्ठ बताया है। जपने के लिये छोटे से छोटा मन्त्र होना चाहिये। बीज मन्त्रों का जाप मन की एकाग्रता को देता है। यदि किसी ने कहीं से कोई मन्त्र न मिला हो तो **नमः शिवाय नमः शिवाय** का जाप करते रहो। मन्त्र जाप में साधक को तीन प्रकार की कृपायें मिलती हैं। एक तो शक्ति मिलती है उस मन्त्र के देवता की इष्टदेव की दूसरी सहायता उन सब सिद्धों को मिलती है जिन्होंने उस मन्त्र का जाप करके सिद्धि प्राप्त की है तथा तीसरी कृपा गुरुदेव की मिलती है, जिन्होंने मन्त्र का उपदेश दिया है। इस प्रकार मन्त्र को मेरुदण्ड को सीधा रखकर प्रतिदिन दो तीन घण्टे जप लिया करोगे तो धीरे-धीरे अन्तः प्रकाश प्रकट हो जायेगा। देखो! जब तुम माँ

के पेट में पड़े हुये थे तो तुमने भगवान् से प्रतिज्ञायें की हुई हैं! सातवें माह में गर्भ में जीव को ईश्वर दिव्य दृष्टि देता है जिससे उसे अगले पिछले जन्मों का तथा उनमें होने वाले सारे दु:खों का ज्ञान हो जाता है। पेट में पड़ा हुआ जीव ईश्वर से प्रतिज्ञा करता है।

यदि योन्याः प्रमुच्येऽहं तत्प्रपद्ये नारायणम्

अशुभ क्षय कर्तारम् फल मुक्ति प्रदायकम्।

यदि मैं इस नरक से छूट गया तो नारायण की शरण में जाऊँगा, महेश्वर की शरण में जाऊँगा जो सारे अशुभ का नाश कर मुक्ति प्रदान करने वाले हैं।

आगे कहता है–

यदि योन्याः प्रमुच्येऽहं सांख्ययोगमभ्यसे।

अर्थात् यदि मैं गर्भ से बाहर आ जाऊँगा तो मैं सांख्य योग का अभ्यास करूँगा जिससे मैं अपने शाश्वत स्वरुप को प्राप्त हो जाऊँगा। इस प्रकार से नाना प्रकार से ईश्वर से प्रतिज्ञायें करता है। किन्तु पेट से बाहर आते ही सब कुछ भूल जाता है। इसलिये जब तक शरीर स्वस्थ है, बुढ़ापा दूर है, इन्द्रियों में शक्ति है योगाभ्यास की कमाई कर लो। गुरु मन्त्र का खूब जाप करो! गुरु तो ऐसी चीज है भीतर से शक्ति मिलती है। कुछ हाथ पैर तो हिलाओ। परमात्मा सबका गुरु है प्रयत्न करने वालों की सहायता अवश्य बनेगी। कम से कम इतना तो कर लो मनुष्य जन्म दोबारा मिल जाये। इसलिये ध्यान योग का अभ्यास करो। प्रभु जी की कृपा होगी सबका भला होगा!

बार बार आशीर्वाद।

सम्पादकीय

सिद्धयोग-हमारी प्यारी पत्रिका

—योगाचार्य डॉ. दासलाल ब्रह्मचारी

प्रिय पाठकगण/गुरु भाई-बहिन,

जय गुरुदेव की!

क्षण-क्षण स्मरणीय गुरुदेव योगेश्वर अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज के संकल्प से प्रकट कल्पवृक्ष के रूप में हमारी पत्रिका 'सिद्धयोग' अपनी आयु के 49 वर्ष पूरा करके अप्रैल विशेषांक के साथ ही 50वें वर्ष में प्रवेश कर जाएगी। श्री गुरुदेव भगवान ने इस पावन वृक्ष का आरोपण सन् 1968 में किया था, जिसका एकमात्र लक्ष्य था कि योग जिज्ञासु इसके माध्यम से योग तत्व व सिद्धान्त को समझ लें जिससे योग मार्ग पर चलकर आध्यात्मिक उन्नति के चरम लक्ष्य की ओर वे चल सकें। आज के इस विकासशील युग में भौतिक उन्नति के साथ-साथ धार्मिक एवं आध्यात्मिक क्षेत्र में भी जागरूकता आ गयी है। इसी क्रम में धार्मिक व आध्यात्मिक पत्र-पत्रिकाओं का भी समाज में व्यापक प्रचार कार्य चल रहा है। किन्तु 'सिद्धयोग' जिस प्रकार से योग के सैद्धांतिक दुरूह व दुर्बोध्य पक्ष को अत्यन्त सरल भाषा में बोधगम्य बना देती है ऐसा दूसरी पत्रिकाओं में देखने को नहीं मिलता।

'सिद्धयोग' गुरुदेव से सम्पर्क बनाये रखने का सक्षम माध्यम रही है। साधक घर बैठे ही गुरुदेव के उपदेश एवं आज्ञाओं का संकेत पा जाया करते हैं। पत्रिका के माध्यम से भी गुरुदेव की आत्मिक शक्ति का संचार शिष्यों में होता रहता है। साधकों के मन में उठने वाले संशयों का निवारण भी इससे हो जाता है।

वेदान्त प्रक्रिया में आत्म दर्शन की ओर चलने के साधन के रूप में तीन अंगों का वर्णन किया गया है। वेदान्त का सिद्धान्त है-**आत्मा वा अरेद्रष्टव्यः, श्रोतव्यः मन्तव्यः निदिध्यासितव्यः**। अर्थात् आत्मा का दर्शन करना चाहिए। इसके लिए सर्वप्रथम श्री गुरुदेव के मुख से आत्म तत्व के विषय में श्रवण करना चाहिए। श्रवण करने के पश्चात् मनन करना चाहिए। ठीक प्रकार से मनन हो जाने पर निदिध्यासन में बैठना चाहिए। निदिध्यासन ही योग की भाषा में ध्यान-योग का अभ्यास कहलाता है। श्री गुरुदेव जब शिष्य को उपदेश

करते हैं तो शब्द के माध्यम से शिष्य पर शक्ति संचार होता है। योग के ग्रन्थों में शक्तिपात की अनेक प्रकार की दीक्षाओं का वर्णन मिलता है। इनमें संकल्प दीक्षा, स्पर्श दीक्षा, दृग दीक्षा, हार्द दीक्षा आदि दीक्षाओं का वर्णन मिलता है। गुरुदेव दीक्षा दान के समय गुरुमन्त्र के माध्यम से शिष्य के दाहिने कर्ण में शक्ति का संचार करते हैं। आनन्दकन्द श्री गुरुदेव भगवान् ने 'सिद्धयोग' परम्परा को अक्षुण्ण रखा है। सिद्धयोग के पठन से कोई भी योग जिज्ञासु योग की परिभाषा, स्वरूप, विधि एवं लक्ष्य समझ सकता है। श्रद्धालु साधकों में सिद्धयोग के माध्यम से ही गुरुदेव के दर्शन एवं कृपालाभ होते देखा गया है। जीवन से परेशान कई व्यक्तियों को सन्मार्ग मिला और जीवन की धारा ही बदल गयी। पत्रिका के पठन–पाठन एवं अनुशीलन से उत्साह, उल्लास एवं मार्गदर्शन मिलता है। योग शास्त्र अत्यन्त गहन है, इसके दुरूह विषयों को समझना बहुत कठिन है; किन्तु सिद्धयोग ने इसे अत्यन्त सरल एवं सुबोध्य बनाया है। पत्रिका का अध्ययन साधक के अन्दर श्रद्धा का बीज बो देता है। जिसे योग साधना की नींव माना गया है। जिसमें सम्यक् श्रद्धा नहीं है, वह विनष्ट हो जाता है। भगवान के गीता में वचन हैं–''**संशयात्मा विनश्यति**'' अर्थात् संशय युक्त व्यक्ति पथभ्रष्ट होकर पतन की ओर चला जाता है। इसलिए 'सिद्धयोग' श्रद्धा एवं स्वाध्याय का अचूक साधन है। साधक को स्वाध्याय में प्रमाद नहीं करना चाहिए। गुरुदेव अपने शिष्यों को उपदेश करते हुए कहते हैं कि–''**स्वाध्यायाद् मा प्रमदितव्यम्**'' अर्थात् स्वाध्याय में कदापि प्रमाद नहीं करना चाहिए। गुरुमन्त्र का जाप भी उत्तम श्रेणी का स्वाध्याय है, इसमें प्रमाद या लापरवाही नहीं करनी चाहिए। अस्तु।

पत्रिका के लिए, गुरुदेव के समय से ही, किसी प्रकार की विज्ञापन आदि सामग्री प्रकाशनार्थ स्वीकार कर वित्तीय आय जुटाने अथवा सहायता प्राप्त करने का उद्देश्य नहीं रहा है, वह आज भी यथावत् है। 25–30 हजार रुपये का वार्षिक घाटा सहन करके भी पत्रिका अबाध गति से प्रकाशित हो रही है, यह सब पूज्य गुरुदेवजी की कृपा का ही फल है। उदारमना गुरुभाई–बहिनों के आर्थिक सहयोग से घाटे की पूर्ति हो जाती है।

अन्त में, मैं उन सभी मनीषी विद्वान लेखकों एवं रचनाकार कवियों के प्रति आभार प्रकट करना अपना कर्त्तव्य समझता हूँ, जिनके उत्कृष्ट योगपरक लेख एवं सारगर्भित रचनाओं से पत्रिका की महत्ता व शोभा बनी हुई है। मैं उनसे इसी प्रकार अपनी रचनायें, लेखादि निरन्तर भेजते रहकर स्नेह भाव बनाये रखने का नम्र अनुरोध करता हूँ। पत्रिका के पाठकों व ग्राहकों से भी निवेदन करूँगा कि वे नियमित ग्राहक बने रहें तथा कम से कम

5 नये सदस्य अवश्य जोड़ें। इस दिशा में गंगापुर मंडल, कानपुर मंडल व सहारनपुर मंडल के साधकों का प्रयास वस्तुतः स्तुत्य है। इस अंक के साथ ही वार्षिक ग्राहकों का शुल्क समाप्त हो रहा है, अतः समय पर आगामी वर्ष के लिए शुल्क भेज दें। वार्षिक शुल्क रु. 180/– हो गया है तथा आजीवन शुल्क रु. 1000/– हो गया है।

आप सभी के लिए आने वाला वर्ष मंगलमय हो।

आनन्दकन्द श्री प्रभुजी का परम पावन प्राकट्य दिवस श्री रामनवमी योग महोत्सव के रूप में सवाँई आश्रम, आगरा में बड़े हर्षोल्लास व धूमधाम से मनाया जायेगा, सभी श्रद्धालु भक्त उसमें सम्मिलित होकर श्री प्रभुजी की कृपा कोर को पाकर जीवन को धन्य बना लें। इस अवसर पर श्री प्रभुजी के चरणों में सभी भक्तों का कोटि–कोटि नमन है।

श्री रामनवमी योग महोत्सव दिनांक 3, 4 व 5 अप्रैल, 2017 को मनाया जाना निश्चित हो चुका है।

सभी गुरु भक्तों को चाहिये कि श्री रामनवमी के पवित्र उत्सव पर धाम पर पहुँचें तथा गुरुदेव की कृपा को प्राप्त करें। जो यह मानते हैं कि गुरुदेव तो हैं नहीं वहाँ जाकर क्या करेंगे यह उनकी महान भूल है। गुरुदेव की शक्ति तो अनवरत बरसती रहती है। गुरुदेव कहा करते थे कि श्री सिद्धगुफा से ही सारी दुनिया को योग का प्रकाश मिल रहा है। अतः सभी आश्रम की शाखाओं के संचालकों को चाहिये स्वयं भी आवें और अन्य गुरु भक्तों को पवित्र धाम के दर्शन करावें ताकि योग ध्यान में उत्तरोत्तर उन्नति पा सकें। जीवन में यदि आत्म दर्शन पा लिया तो अत्युत्तम बात है अन्यथा 'महती विनष्टि' महान संताप की बात है–बहुत बड़ी हानि की बात है। अतः आत्मदर्शन का लक्ष्य सामने रखते हुये **'कार्यम् वा साधेयम् देहं वा पातेयम्'** अर्थात् या तो आत्मसिद्धि रूप महान कार्य को सिद्ध करूँगा या मेरा देह पात हो जाए तब भी कोई चिन्ता न मानते हुए सतत् आत्म लाभ की ओर अग्रसर रहना चाहिये। भौतिक भोगवाद प्रपञ्च है अपने साथ धोखा है। अतः सत्य की प्राप्ति के लिए प्राणपण से लग जायें।

जय गुरुदेव जी की।

आपका

डॉ. दासलाल योगाचार्य

संपादक सिद्धयोग

''ॐ श्री रामलाल प्रभवे नमः''

श्रीमद्भागवत् में योग-परिचर्चा

—डा. विजय सिंह

स्कन्ध आठ के बीसवें अध्याय में बलि द्वारा भगवान की स्तुति तथा भगवान का उस पर प्रसन्न होने की कथा विस्तार से कही गयी है। बलि जिस समय वरुण पास में बँधा भगवान की स्तुति कर रहा था उसी समय बलि के दादा प्रह्लाद जी आये। प्रेम के उद्रेक से उनका शरीर पुलकित हो गया। वे आनन्द पूर्ण हृदय से प्रभु के पास जाकर साष्टाङ्ग प्रणाम किया। प्रह्लाद जी बोले–प्रभो! लक्ष्मी के मद से तो विद्वान पुरुष भी मोहित हो जाते हैं। अतः उस लक्ष्मी को छीनकर महान उपकार करने वाले, समस्त जगत के महान ईश्वर, सबके हृदय में विराजमान और सबके साक्षी श्रीनारायण देव को मैं नमस्कार करता हूँ।

ब्रह्मा जी हाथ जोड़कर भगवान वामन से बोले–प्रभो! आपने इसका सर्वस्व ले लिया है, अतः अब इसे क्षमा दान दें।

भगवान ने कहा–ब्रह्माजी! मैं जिस पर कृपा करता हूँ, उसका धन छीन लिया करता हूँ। क्योंकि धन से मनुष्य मतवाला हो जाता है, तब मेरा और संतों का तिरस्कार करने लगता है। सत्यवादी बलि ने अपना धर्म नहीं छोड़ा। अतः इसे वह स्थान देता हूँ जो देवताओं के लिये भी दुर्लभ है। सावर्णि मन्वन्तर में यह मेरा परम भक्त इन्द्र होगा। तब तक सुतल लोक में रहे।

भगवान की बलि पर यह कृपा देखकर प्रह्लाद जी ने कहा–प्रभो! आपने अपनी योगमाया से खेल-खेल में त्रिभुवन की रचना कर दी। आप सर्वज्ञ, सर्वात्मा और समदर्शी हैं–

''चित्तं तवे हितमहोऽमित योग माया।
लीलाविसृष्ट भुवनस्य विसारदस्य।
सर्वात्मनः समदृशो विषम स्वभावो
भक्तिप्रियो यदसि कल्पतरुस्वभाव।।8।।

(अ. 23 स्क. 8)

स्कन्ध आठ के चौबीसवें अध्याय में राजा परीक्षित ने शुकदेव जी से पूछा–भगवन! मत्स्ययोनि तमोगुणी और असह्य परतंत्रता से युक्त है। भगवान ने मत्स्या अवतार किस कारण से लिया यह उपाख्यान सुनने की इच्छा है।

शुकदेव जी ने कहा–परीक्षित! पिछले कल्प के अन्त में ब्राह्म नामक प्रलय हुआ था। उस समय भूलोक समुद्र में डूब गया था। प्रलय काल आ जाने से ब्रह्माजी को नींद आ रही थी, वे सोना चाहते थे। वेद उनके पास से गिर पड़े। हयग्रीव नामक दैत्य ने उन्हें चुरा लिया। भगवान श्री हरि ने हयग्रीव की चेष्टा जान ली। उन्होंने वेदोद्धार हेतु मत्स्यावतार ग्रहण किया।

परीक्षित! सत्यव्रत नाम के नारायण परायण राजा मात्र जल पीकर तप कर रहे थे। जब कृतमाला नदी में वे तर्पण कर रहे थे उसी समय उनकी अंजुली के जल में एक नन्ही सी मछली आ गयी। उसे उन्होंने नदी में डाल दिया। उस मछली ने दीनता पूर्वक राजा से कहा–राजन! आप बड़े दयालु हैं मुझे नदी में क्यों डाल दिये जल जन्तु हमें खा जावेंगे। राजा ने उस मछली के जीवन रक्षा का संकल्प किया। मछली को अपने कमण्डल के जल में डालकर आश्रम ले आये। एक रात में ही वह मछली इतनी बड़ी हो गयी कि उसे कमण्डल में रहना मुश्किल हो गया। राजा ने उसे एक बड़े मटके में भरे जल में रख दिया। परन्तु दो ही घड़ी में वह मछली तीन हाथ बढ़ गयी। राजा ने उसे एक सरोवर में डाल दिया। परन्तु वह थोड़ी ही देर में इतनी बढ़ गयी कि एक महामत्स्य का आकार धारण कर सरोवर के जल को घेर लिया। अन्तोगत्वा उस लीला मत्स्य को राजा ने समुद्र में छोड़ दिया और पूछा–मत्स्य का रूप धारण कर मुझे मोहित करने वाले आप कौन हैं? अवश्य ही आप साक्षात् सर्वशक्तिमान् सर्वान्तर्यामी अविनाशी हरि हैं। मैं आपको प्रणाम करता हूँ। आपका यह विराट् मत्स्य रूप बड़ा ही अद्भुत है।

मत्स्य रूपी भगवान ने कहा–सत्यव्रत! आज से सातवें दिन तीनों लोक प्रलय के समुद्र में डूब जायेंगे। उस समय मेरी प्रेरणा से तुम्हारे पास एक बड़ी नौका आयेगी। उस समय सप्तर्षियों सहित सर्व धान्य तथा छोटे–बड़े बीज रख लेना। भगवान राजा सत्यव्रत को यह आदेश देकर अन्तर्धान हो गये। उस संकट की घड़ी में अकस्मात् एक बड़ी नाव सन्मुख प्रकट हो गयी। उसमें सब जीवों, बीजों एवं सप्तर्षियों सहित सवार होकर राजा ने ध्यान द्वारा भगवान का आवाहन किया। उसी समय सोने के समान दैदीप्यमान विराट शरीर वाले प्रकट हुये। उनके शरीर में एक भारी सींग भी था–

सोऽनुध्यातस्ततो राज्ञा प्रादुरासीन्महार्णवे।
एकश्रृङ्गधरो मत्स्यो हैमो नियत योजनः।।44।।

(अ.24 स्क.8)

भगवान की आज्ञा से नौका को वासुकी नाग के द्वारा भगवान के सींग में बाँध दिया गया। सप्तर्षियों सहित राजा भगवान की स्तुति करने लगे। यह स्तुति आध्यात्म ज्ञान को

प्रकट करने वाला है। राजा सत्यव्रत ने कहा–प्रभो! संसार के जीवों का आत्मज्ञान अनादि अविद्या से ढक गया है। वे इस कारण से क्लेशों के भार से पीड़ित रहते हैं। जब आपके अनुग्रह से वे आपकी शरण में पहुँच आपको प्राप्त कर लेते हैं। अतः हमें बन्धन से छुड़ाकर वास्तविक मुक्ति देने वाले परमगुरु आप ही हैं–

अनाद्यविद्योपहतात्मसंविद–

स्तन्मूलसंसार परिश्रमातुराः।

यदृच्छयेहोपसृता यमाप्नुयु–र्विमुक्तिदो नः परमोगुरुर्भवान।।46।।

(अ.24 स्क.8)

आपकी उपासना से ही अज्ञान नष्ट होता है अतः हे मेरे परमगुरु कृपाकर मेरे हृदय की गाँठ काट दें। जैसे अग्नि में तपाने से सोना–चाँदी के मल दूर हो जाते हैं। वैसे ही आपकी सेवा से जीव के अन्तःकरण का मल अज्ञान नष्ट हो जाता है फलस्वरूप जीव अपने स्वरूप में स्थित हो जाता है। प्रभु! आप सर्वशक्तिमान अविनाशी हमारे गुरुजनों के भी गुरु हैं अतः आप ही हमारे गुरु बनें–

यत्सेवयाग्नेरिव रुद्ररोदनं

पुमान् विजह्यान्मलमात्मनस्तमः।

भजेत वर्णं निजमेष सोऽव्ययो

भूयात् स ईशः परमो गुरोर्गुरुः।।48।।

अतः हम आत्मतत्व को जानने हेतु आपको ही गुरु के रूप में वरण करते हैं–"वृतो गुरुर्नः स्वगतिं बुभुत्सताम्"

अज्ञानी मनुष्य अज्ञानियों को जिस ज्ञान का उपदेश करता है, वह तो अज्ञान ही है। आप सारे लोक के हितैषी प्रियतम और आत्मा हैं। गुरु द्वारा प्रदत्त ज्ञान और आत्मसिद्धी भी आपका ही स्वरूप है "त्वं सर्वलोकस्य सुहृत् प्रियेश्वरो ह्यात्मा गुरुर्ज्ञानमभीष्टसिद्धिः।"

मैं आपसे ज्ञान प्राप्त करने हेतु आपके शरण में आया हूँ। आप परमार्थ को प्रकाशित करने वाली अपनी वाणी के द्वारा मेरे हृदय की ग्रन्थि काट करके अपने स्वरूप को प्रकाशित कीजिये–

तं त्वामहं देववरं वरेण्यं

प्रपद्य ईशं प्रतिबोधनाय।

छिन्ध्यर्थदीपैर्भगवन् वचोभि–

र्ग्रन्थीन हृदय्यान विवृणु स्वमोकः।।53।।

(अ.24 स्क.8)

आत्मचिन्तन

—प्रो. ऋषिराम शर्मा

हमारा यह मनुष्यलोक कर्मभूमि है। कर्म बुद्धिगत अहंभाव से किये जाते हैं। यदि कर्म के पीछे परोपकार, परहित तथा परसुख की भावना मन में जन्म लेती है तब वह पुण्यकर्म है और यदि इसके विपरीत भावना है, तब वह पापकर्म है। पुण्यकर्म के फल का भुगतान सुखानुभूति में होता है तथा पापकर्म के फल का भुगतान दुःखानुभूति में होता है। गुरुगीता इस सत्य की पुष्टि करती है कि–

पुण्यात् सुखमाप्नुवन्ति पुण्यं नैव कुर्वन्ति मानवाः।
पापात् दुःखमाप्नुवन्ति पापं कुर्वन्ति यत्नतः।।

अर्थात् मनुष्यों की यह विडम्बना है कि पुण्यकर्म का फलसुखानुभूति है किन्तु प्रायः मनुष्यों की प्रवृत्ति पुण्यकर्मों में नहीं होती। पापकर्म का फल दुःखानुभूति है किन्तु प्रायः मनुष्यों की प्रवृत्ति हठपूर्वक पापकर्मों में होती है। यही मनुष्यजीवन की विडम्बना है। महर्षि पतंजलि का भी यही कथन है कि–

ते ह्लादपरितापफलाः पुण्यापुण्यहेतुत्वात्।।

अर्थात् पुण्य तथा पाप के आधार पर प्रारब्ध सुखानुभूति तथा दुःखानुभूति के रूप में क्रमशः प्रकट होता है। यही त्रिकालसत्य है।

परमात्मा की लीला में मनुष्योनि में जीवात्मा को प्रारब्ध के भुगतान के साथ–साथ कर्माशय में कर्मवृद्धि का भी अधिकार परमात्मा की विशिष्ट कृपा से मिला है जबकि अन्य योनियाँ केवल भोगयोनियाँ हैं। मनुष्यों के लिए एक और विशेष कृपा की गयी है।

''तीव्रसंवेगानामासन्नः।।

(योगदर्शन 1/21)

अर्थात् तीव्रसंवेग वाले कर्मों जैसे एकाग्रचित्त की प्रार्थना, सिद्धपुरुषों का संकल्प, कठोर तप तथा समाधि की योग्यता वाले कर्त्ता के कर्म प्रारब्ध का तन्वीकरण तथा विस्तार करने में समर्थ होते हैं। मनुष्ययोनि पर परमात्मा की अत्यन्त महत्वपूर्ण कृपा है उसको विवेकबुद्धि प्रदान करना। इसी के द्वारा पुरुष तथा प्रकृति के सम्बन्धों तथा रहस्यों को जाना जा सकता है, अन्यथा नहीं। प्रकृति तथा पुरुष के विषय में भगवान श्रीकृष्ण का कथन है कि–

प्रकृतिं पुरुषं चैव विद्धि अनादी उभौ अपि।
विकारांश्च गुणाश्चैव विद्धि प्रकृतिसम्भवान्।।

कार्यकरणकर्तृत्वे हेतुः प्रकृतिरूच्यते।
पुरुषः सुखदुःखानां भोक्तृत्वे हेतुरूच्यते।।
पुरुषः प्रकृतिस्थो हि भुंक्ते प्रकृतिजान् गुणान्।।
कारणं गुणसंगोऽस्य सदसद्योनिजन्मसु।।
उपदृष्टा अनुमन्ता च भर्ता भोक्ता महेश्वरः।
परमात्मेति चाप्युक्तो देहे अस्मिन् पुरुष परः।।
यः एवं वेत्ति पुरुषं प्रकृतिं च गुणैः सह।
सर्वथा वर्तमानोऽपि न स भूयोऽभिजायते।।

अर्थात् पुरुष तथा प्रकृति दोनों अनादि हैं, क्योंकि दोनों में धर्मी तथा धर्म का सम्बन्ध है जैसे कि अग्नि तथा उष्णता का सम्बन्ध है। प्रकृति के गुणविकारों से उत्पन्न चित्त तथा वासनाओं को भी महर्षि पतंजलि ने अनादि कहा है कि–

तासामनादित्वं चाशिषो नित्यत्वात्।।

(योगदर्शन 4/10)

अर्थात् प्रत्येक युग तथा काल में प्रत्येक जीवात्मा में जन्म लेते ही जीवन की वासना तथा मृत्यु का भय नित्य बना रहता है। यह वासना का अनादित्व सिद्ध करता है। प्रकृति से प्रकट होने वाले गुण, गुणविकारों के अनन्त भाव तथा कर्माशय का कर्मविधान, सृष्टि के कारण–कार्य का तानाबाना बुनकर दृश्यजगत का निर्माण करते हैं। **''तत्सृष्टवा तदनुप्राविशत्''** के अनुसार पुरुष जड़ प्रकृति को चैतन्यवान करने के लिए उसमें अन्यात्मा होकर प्रवेश करके लोकलीला के लिए भोक्ता बन गया है। वेदशास्त्र इसका प्रमाण है कि–

कूटस्थो निर्गुणो व्यापी चैतन्यात्मा स्वभावतः।
दृष्यते ह्यर्थरूपेण पुरुषैः भ्रान्तदृष्टिभिः।।
ये तु ब्रह्मविदः विशुद्धचेतसः ते अखिलं जगत्।
ज्ञानात्मकं पश्यन्ति त्वत्रूपं परमेश्वरम्।।
सर्वगे तु निराधारे चैतन्यात्मनि संस्थिता।
अविद्या द्विगुणां सृष्टिं करोति आत्मालम्बनात्।।

अर्थात् पुरुष स्वभावतः सर्वसाक्षी, निर्गुण, सर्वव्यापी तथा सच्चिदानन्दस्वरूप है, किन्तु माया के वशीभूत भ्रान्तिज्ञान से युक्त पुरुष यानि जीवात्मायें सर्वाधार आत्मतत्व को दृश्यजगत के रूप में ही देखते हैं जिस प्रकाश प्रोजेक्टर से आने वाले प्रकाश को दर्शक चलचित्र के पर्दे पर मूवी के संसार के रूप में देखते हैं। विशुद्ध अन्तःकरण वाले ब्रह्मज्ञानी योगी इस सम्पूर्ण जगत को ज्ञानस्वरूप परमात्मा के रूप में ही अनुभव करते हैं। सत्य यही है कि स्थूल तथा सूक्ष्म रूप यह सम्पूर्ण दृश्यजगत परमात्मा की माया ने ही सर्वव्यापी

चैतन्यस्वरूप परमात्मा का आलम्बन लेकर सृजित किया है। इसीलिए इस पंच भूतात्मक कारण, मन, बुद्धि तथा इन्द्रियादि करण तथा दृश्यजगत रूप कार्य की मूलकारण प्रकृति ही है। प्रकृति में प्रविष्ट पुरुष प्रकृति के गुणों का भोक्ता बनकर मायाबद्ध हो गया है, किन्तु परम सत्य यही है कि सर्वसाक्षी अक्षर ब्रह्म, सर्वनियन्ता परमात्मा, विश्व का पालनकर्ता तथा जीवभाव में भोक्ता भी एक ही परम पुरुष परमेश्वर है। जो जीवात्मा योगसिद्धि प्राप्त कर आत्मज्ञ हो गयी है वही पुरुष तथा प्रकृति के अभेदज्ञान तथा भेदज्ञान दोनों के रहस्यों तथा सत्य को जान जाती है, वह गुणातीत होकर मायापाश से मुक्त हो जाती है और स्वतन्त्र तथा जीवनमुक्त होकर जन्ममरण के बन्धन से मोक्ष पा जाती है। यह तो सत्य है कि–

''आत्मनि ज्ञाते सर्वमिदं विज्ञातं भवति।।''

अर्थात् आत्मज्ञान के बाद कुछ भी ज्ञातव्य शेष नहीं रहता, किन्तु आत्मा तो बुद्धिबोधात्मक है और बुद्धि मायाकृत है तो आत्मज्ञान कैसे सम्भव हो। मन माया का प्रतिनिधि है तथा मन में माया के कामक्रोधादि गुणविकारों का अधिपत्य रहना स्वाभाविक है।

प्रभू राम लाल प्रभवै नमः

पार करो मेरा बेड़ा

जगदीश राए बंसल ''अधम''

पार करो मेरा बेड़ा गुरुजी, पार करो मेरा बेड़ा।
चारों तरफ अन्धेरा गुरुजी, चारों तरफ अन्धेरा।।

जन्म जन्म मैंने पाप कमाया
पूजा पाठ कभी याद न आया
मुझे आसरा तेरा, पार करो .... (1)

भंवर में फंसी है मेरी नैय्या
तुम बिन नहीं कोई खेवैय्या
काटो बन्धन मेरा, पार करो .... (2)

गुरुदेव का मैं शरणा पाऊँ
मोह माया से पार हो जाऊँ
हृदय करो बसेरा, पार करो .... (3)

सुबह श्याम मैं आरती गाऊँ
गुरुदेव का दीदार मैं पाऊँ
अधम विनय उचारा, पार करो ....(4)

श्री रामलाल प्रभवे नमः

योग दर्शन

–आचार्य, श्री सिद्ध गुफा सवांई आगरा

योग दर्शन ही वस्तुतः आध्यात्म दर्शन है। महर्षि पतंजलि देव जी ने योग दर्शन में अविद्यादि क्लेशों को दुःख के रूप में माना है और इसके निवारण का उपाय योग को बताया है। योग विद्या 'प्रत्यक्षावगमम्' अर्थात् प्रत्यक्ष अनुभव करने की वस्तु है अर्थात् अपरोक्षानुभूति के द्वारा सभी तत्त्वों का साक्षात्कार किया जा सकता है। इसलिए समस्त दर्शनों में क्रियात्मक (Practical) होने के कारण सर्वमान्य व लोकप्रिय है। केवल आस्था पर आधारित नहीं है।

उपनिषद् का उद्घोष है कि योग मार्ग से बढ़कर मुक्ति का दूसरा मार्ग नहीं है–**'तस्मात् योगात् परतरम् नास्ति मार्गस्तु मोक्षदः** मन को एकाग्र करके ही साधक तत्त्वज्ञान या आत्म साक्षात्कार की ओर बढ़ सकता है। मन को एकाग्र करने के लिए विभिन्न उपायों का वर्णन करते हुए कुछ खास उपाय योग दर्शन में बताये हैं जिनका मैं सूत्रों के द्वारा वर्णन कर रहा हूँ।

उनमें से प्रथम उपाय है–

1. 'प्रच्छर्दन विधारणाभ्यां व प्राणस्य'

अर्थात् नासिकारंध्रों द्वारा प्राणवायु को बाहर फेंकना प्रच्छर्दन तथा रोकना विधारणा कहलाता है। प्रच्छर्दन में प्राण वायु को जोर–जोर से बाहर निकालें किन्तु अंदर न रोकें। इस क्रिया में रेचक किया जाता है पूरक स्वयमेव होता रहता है। इसमें कुम्भक नहीं किया जाता इस क्रिया को 25–30 बार एक साथ किया जा सकता है। रेचक के साथ–साथ यथाशक्ति बाह्य कुम्भक करें अर्थात् वायु को बाहर ही रोकने का प्रयास करें। आजकल के समय में लोग इसे कपालभाँति के नाम से जानते हैं जो खूब प्रचलन में है। अनुभवी साधकों का अनुभव है कि इस क्रिया को करने के पश्चात् ध्यान में बैठने पर मन स्वतः ही एकाग्र होने लगता है और साधक को अत्यन्त आनन्द की अनुभूति होने लगती है। और ध्येय में वृत्ति स्थिर हो जाती है। जब अभ्यास परिपक्व हो जाए तो इसमें बाह्य कुम्भक की भाँति

आभ्यंतर कुम्भक भी कर सकते हैं जिसका समय बाह्यकुम्भक के बराबर या आधा रख सकते हैं। आभ्यंतर कुम्भक के समय मूलबंध लगाते हुए नाभि पर ध्यान रहे।

विधारणा शब्द के टीकाकारों ने रेचक, पूरक और कुम्भक अर्थ भी लिया है वैसे इस प्राणायाम का विशेष वर्णन प्राणायाम के प्रकरण में साधन पाद में विस्तार से किया है। इसके अतिरिक्त एक सूत्र और है **'तस्मिन सति श्वासप्रश्वासयोर्गतिविच्छेदः प्राणायामः'** का सूत्र है जिसमें श्वास-प्रश्वास की गति को रोक लिया जाता है। अर्थात् आभ्यंतर कुम्भक का अभ्यास किया जाता है। प्राणायाम में रेचक, कुम्भक और पूरक को 1: 2: 4 के अनुपात में किया जाता है। जिसका परिणाम है प्रकाश के आवरण का क्षय अर्थात् दिव्य दृष्टि की प्राप्ति। चित्त वृत्ति ठहर जाती है। न किंचिदपि चिंत्येत-की उक्ति चरितार्थ हो जाती है। प्राणायाम के अभ्यास की अनेकों विधियाँ हैं जो हठयोग से सम्बन्धित हैं जो गुरु गम्य हैं।

मन को एकाग्र करने का दूसरा उपाय है-

2. 'विषयवती वा प्रवृतिरूत्पन्ना मनसः स्थिति निबन्धिनी'।

शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध ये इंद्रियों के विषय कहे जाते हैं और ये तन्मात्र भी कहे जाते हैं। शब्द, स्पर्श आदि के दो रूप हैं जब व्यक्ति बहिर्मुखी वृत्ति से इनका प्रयोग लौकिक उद्देश्य से करता है तो वह भोग कहलाता है जो सुख-दुःख का दाता होता है। किन्तु इसे ही अंतर्मुखी करके इन तन्मात्राओं में मन को लय करें तो वह योग कहलाता है जो साधक के लिए मुक्ति का द्वार खोल देता है। गन्ध तन्मात्र का उदाहरण भाष्यकार ने दिया है जिसके अनुसार नासिका के अग्रभाग में मन को संयमित करने पर दिव्य गन्ध का साक्षात्कार साधक को होने लगता है जिसे गन्ध संवित कहते हैं। महाप्रभु श्री रामलाल जी महाराज के समय में साधकों को विषयवती गन्ध प्रवृत्ति रहती थी। दिव्य गन्ध का साक्षात्कार होने के कारण उन्हें सर्वत्र गन्ध की ही अनुभूति रहती थी। शरीर के रोम कूपों से व प्रश्वास से भी दिव्य गन्ध बाहर निकलती थी। इसी तरह से शब्द तन्मात्र का साक्षात्कार साधक को होता है। जिह्वा के मूल में संयम करने से दिव्य शब्द संवित होता है दिव्य नाद सुनाई देने लगते हैं इसी का एक रूप है नादानुसंधान। इसी प्रकार से स्पर्श, रूप, रस आदि तन्मात्राओं में मन को एकाग्र करके आधात्म लाभ लिया जा सकता है।

राधास्वामी मत में 'सुरत शब्द' के नाम से भीतर की नाद को सुनकर उसमें मन को लय करने की प्रक्रिया प्रचलन में है।

मन को एकाग्र करने का अगला उपाय है–

3. 'विशोका वा ज्योतिष्मती'

अर्थात् विशोका शोक रहित या ज्योतिष्मती प्रकाश वाली प्रवृत्ति उत्पन्न होने पर मन की स्थिति दृढ़ बन जाती है। नाभि के ऊपर जो हृदय देश है उसमें जो हृदय कमल है उसका मुख नीचे की ओर है। उस कमल को रेचक या प्रच्छर्दन के द्वारा ऊर्ध्वमुखी या प्रफुल्लित किया जाता है। उस ऊर्ध्वमुख प्रफुल्लित कमल के मध्य में 'ॐ' है उसका आकार सूर्यमंडल जाग्रत स्थान है। उसके ऊपर 'उ' कार चंद्रमंडल और स्वप्न स्थान है। उसके भी ऊपर वह्निमण्डल, सुषुप्ति स्थान है। उसके ऊपर आकाश स्वरूप ब्रह्मनाद या तुरीय स्थान है। उस कमल की कर्णिकाओं में स्थित जो ऊर्ध्वमुखी सुषुम्ना नाड़ी है उसे ब्रह्मनाड़ी भी कहते हैं। यह नाड़ी अंतस्थ सूर्यादि मंडलों के बीच से होकर मूर्धा पर्यन्त चली गयी है यही चित्त का स्थान है।

ज्योति स्वरुप आकाश तुल्य भासता हुआ चित्त कभी सूर्य, कभी चन्द्र, कभी नक्षत्र तथा कभी मणिप्रभा आदि–आदि रूपों की आकृति वाला प्रतीत होता है ज्योति स्वरूप बुद्धि सत्व का साक्षात्कार ज्योतिष्मती पद का वाच्य है। सत्वगुण प्रधान होने से रजोगुण व तमोगुण से रहित है। इसलिए इसकी विशोका संज्ञा है। उस ज्योतिष्मती में मन को लय करने देने पर समाधि की प्राप्ति हो जाती है।

4. 'वीतराग विषयं व चित्तम्'

मन को एकाग्र करने का एक उपाय है वीतरागी महापुरुषों में चित्त को ध्यान का लक्ष्य बनाया जाए तो मन समाहित हो जाता है। वीतराग पुरुषों के चित्त में संयम करने से समाधि की प्राप्ति हो जाती है। वे लोग स्थिर पद को प्राप्त कर चुके हैं और कैवल्य लाभ उन्हें मिल चुका है। इस प्रकार व्यास, नारद, वशिष्ठ आदि मुनियों के तथा सद्‌गुरु देव के ध्यान से मन सद्यः ही एकाग्र होकर समाधिस्थ हो जाता है। गुरुगीता में **'नास्ति तत्वं गुरोः परम्'** की बात भगवान शिव के द्वारा पुष्ट हो चुकी है अतः सिद्ध सद्‌गुरु का ध्यान भी पतंजलि देव जी को अभीष्ट है।

बन्धन मुक्त पुरुषों को ही वीतरागी कहते हैं। समाधि प्राप्त का एक और साधन है–

5. 'स्वप्न निद्रा ज्ञानालम्बन् वा'

अर्थात् स्वप्न ज्ञान और निद्रा ज्ञान का आलम्बन लेने वाला चित्त समाहित हो जाता है।

यहाँ पर जिस स्वप्न की बात कही गयी है वह जाग्रत स्वप्न है। मानो कोई शिव भक्त कल्पना कर रहा है कि वह कैलाश पर्वत पर भगवान शिव के पास पहुँचकर भगवान का अभिषेक व पूजन कर रहा है आरती वन्दन कर रहा है और स्तुति करके आनंदित हो रहा है तो वह भक्त की मानसिक कल्पना है जो एक स्वप्न ही है यह सतोगुण जाग्रत स्वप्न है ऐसा मेरे गुरुदेव भगवान बतलाया करते थे।

इस प्रकार से उसी स्वप्न ज्ञान के आलम्बन से चित्त एकाग्रता को प्राप्त कर लेता है। कभी–कभी सतोगुणी साधक को स्वप्न में अपने इष्ट या भगवान के दिव्य रूप का दर्शन होता है। उस दिव्य रूप को अपने चित्त में धारण करते हुए बार–बार ध्यान का विषय बनाने से मन एकाग्र हो जाता है।

दूसरा उपाय बताते हैं–निद्राज्ञानाबलम्ब का। निद्रा एक वृत्ति है जो हेया है किन्तु यहाँ पर निद्रा सात्विक निद्रा है तो एक अक्लिष्ट वृत्ति है और समाधि प्राप्ति में सहायक है। 'तत्व वैशारदी' के टीकाकार ने **'निद्रा चेह सात्विकी ग्रहीतव्या'** की बात कह कर इस बात की पुष्टि की है। इस प्रकार की निद्रा सुषुप्ति भी कहलाती है जिससे जग जाने पर व्यक्ति कहता है–बड़े सुखपूर्वक सोया। मेरा चित्त प्रसन्न है। आजकल के समय में योग निद्रा पर काफी चर्चा रहती है यह निद्रा भी कल्पना पर ही आधारित है। महाप्रभु जी ने इसे ही बाल ध्यान के रूप में आविष्कृत किया है। योग निद्रा के विषय में बताते हुए मेरे सद्गुरु देव कहा करते थे कि साधक को चाहिए सोने से पूर्व कुछ समय गुरु मन्त्र का जाप करें तथा थक जाने पर सीधे श्वासन में जाप करते–करते सो जाएं तो यह योग निद्रा बन जाएगी। संत कबीर का इस विषय में दोहा भी है।

सोना तो सबसे भला, जो कोई जाने सोय।
अन्तर लौ लगी रहे, सहज ही सुमिरन होय।।

वेदान्त के मत के अनुसार यह जगत मिथ्या है, अनित्य है और स्वप्नवत है। इस प्रकार से असार संसार से मन को हटाकर वैराग्य भाव से आत्म चिन्तन करना चाहिए। आत्म चिन्तन करना भी सात्विक स्वप्न ही है जो धारणा भी कहलाती है।

मन को एकाग्र करने के लिए एक और उपाय है–

6. 'यथाभिमत ध्यानाद्वा'

भाष्यकार व्यास देव जी कहते हैं–**यदेवाभिमतं तदेव ध्यायेत्'** अर्थात् जो हरि–हरादि

ईश्वर का रूप अच्छा लगे उसी का ध्यान करने से मन एकाग्र हो जाता है। साधक को अनित्य वस्तु का चिन्तन त्यागकर नित्य चेतन का ध्यान करना चाहिए। किसी एक रूप में मन एकाग्र हो जाए तो कालान्तर में उसे किसी और रूप के ध्यान में भी सहज ही लगाया जा सकता है। जो साधक गुरुदेव से दीक्षा प्राप्त कर चुके हैं उन्हें गुरुदेव की आज्ञा को मानकर उपदिष्ट रूप का ही ध्यान करना चाहिए।

अन्तिम उपाय मन को एकाग्र करने का है–

7. 'ईश्वर प्रणिधानाद्वा'

ईश्वर जो परम गुरु है प्रणिधान से अर्थात् भक्ति विशेष से (ध्यान योग से) अभिमुख किया हुआ ईश्वर अपने अभिध्यान मात्र से, संकल्प मात्र से साधक पर कृपा करते हैं। साधक की भावना को जानकर उसके अभीष्ट वस्तु समाधि को वे प्रदान कर देते हैं जिससे साधक समाधिस्थ होकर अपने ईष्ट में या अपने ही स्वरूप में लीन रहने लगता है और कालान्तर में निर्बीज समाधि में प्रवेश पा जाता है। यही भक्ति योग का साधन कहलाता है जिसमें ध्यान योग की आवश्यकता होती है।

इस प्रकार भगवान पतंजलि देव जी ने चित्त को स्थिर करने के आलम्बन या आधार का निरूपण इन सूत्रों के द्वारा किया है। साधक इनमें से किसी एक का चयन करके अपने को साधना के मार्ग पर लगाकर अध्यात्म प्रगति कर सकता है। ये साधन चित्त के परिकर्म या शोधन के उपाय भी कहे जाते हैं। इस प्रकार से निरन्तर अभ्यास करता हुआ योगी परमाणु से लेकर महतत्त्व को भी अपने वशीकार में करके आत्मज्ञान का अधिकारी बना लेता है। इस प्रकार से महर्षि पतंजलि देव जी ने चित्त को एकाग्र करने के अनेक विकल्प (options) दिये हैं। ईश्वर का वाचक ॐ है। जिसका अर्थभावना से जाप किया जाता है।

इन साधनों में ध्यान के लिए किसी एक रूप को चुनकर निरन्तर उसी का ही ध्यान करता चला जाए इसे ही एक तत्त्व अभ्यास कहते हैं।

जय सद्गुरु जी की।

श्री मद्भागवत् में विशुद्ध भक्ति

–हेमराज चोपड़ा, मंडी (हि.प्र.)

श्री मद्भागवत अलौकिकता से परिपूर्ण ग्रंथ है। इसमें वर्णाश्रम, मानव धर्म, कर्मयोग, अष्टांग योग, ज्ञानयोग और मुक्तियोग आदि भगवतप्राप्ति के सभी साधनों का विशद वर्णन है, परन्तु ध्यान से देखा जाए तो इसमें भगवान की भक्ति का ही विशेष रूप से निरूपण किया गया है। साधन और साध्य दोनों प्रकार की भक्ति का वर्णन है। पहले ही स्कन्ध में कहा गया है–

स वै पुंसां परोधर्मो यतो भक्तिरधोक्षजे।
अहैतुक्यप्रतिहता ययाऽऽत्मा संप्रसीदति।।

''मनुष्यों का सबसे उत्तम धर्म–परधर्म वही है जिससे श्री हरि में निष्काम और अव्यभिचारिणी भक्ति हो। भक्ति से आनन्द स्वरूप भगवान को प्राप्त करके ही हृदय प्रफुल्लित होता है।

इसी प्रकार 12वें स्कन्ध के अन्त में कहा गया है–

भवे भवे यथा भक्तिः पादयोत्सव जायते।
तथा कुरुष्व देवेश नाथस्त्वं नो यतः प्रभो।।
नाम संकीर्तनं यस्य सर्वपाप प्रणाशनम।
प्रणामों दुःखशमनस्तं नमामि हरिं परम।।

हे देवदेव हे प्रभो! आप ही हमारे स्वामी हैं। ऐसी कृपा कीजिए जिससे जन्म–जन्म में आपके चरण कमलों में हमारी भक्ति होवे। जिनका नाम संकीर्तन सारे पापों का नाश करने वाला है और जिन्हें किया हुआ प्रणाम समस्त दुखों को शाँत कर देता है, उन परमेश्वर श्री हरि को मैं नमस्कार करता हूँ।

भक्ति की महिमा कहते हुए स्वयं भगवान श्रीकृष्ण ने उद्धव जी से यहां तक कह दिया–

भक्त्याहमेकया ग्राह्यः श्रद्धयाऽऽत्मा प्रियः सताम्,
भक्तिः पुनाति मन्निष्ठा श्वपाकानपि सम्भवात्
वागगदगदा द्रवते यस्य चितं
रुदत्य भीक्ष्णं हसति क्वचिच्च,

विलज्जउद्गायति नृत्यते च
मद्भक्ति युक्तो भुवनं पुनाति

हे उद्धव, मेरी अनन्य भक्ति जिस प्रकार मुझको सहज ही प्राप्त करा सकती है उस प्रकार न तो ज्ञान, न धर्म, न वेदों का स्वाध्याय, न तप और न दान ही करा सकता है। मैं संतों का प्रिय आत्मा हूँ। एक मात्र श्रद्धा सम्पन्न भक्ति से ही मेरी प्राप्ति सुलभ है। दूसरों की तो बात ही क्या, जाति से चाण्डालादि को भी मेरी भक्ति पवित्र कर देती है। इसका उद्घोष भगवान श्रीहरि श्रीमद्भगवद्गीता के नवमें अध्याय के 32वे श्लोक में भी इस प्रकार कर रहे हैं–

मां ही पार्थ व्यपाश्रित्य येऽपि स्युः पापयोनयः
स्त्रियो वैश्यास्तथा शूद्रास्तेऽपि यान्ति परां गतिम

हे अर्जुन, स्त्री वैश्य, शूद्र तथा पापयोनि चाण्डालादि जो कोई भी हों वे भी मेरी शरण होकर परम गति को ही प्राप्त होते हैं।

मनुष्यों में सत्य और दया युक्त धर्म हो, तपस्यायुक्त विद्या हो परन्तु मेरी भक्ति न हो तो वे धर्म और विद्या उनके अन्तःकरण को पूर्ण रूपेण पवित्र नहीं कर सकते। मेरे प्रेम से जब तक शरीर पुलकित नहीं हो जाता, ह्रदय द्रवित नहीं हो उठता, आनन्द के आंसुओं की झड़ी नहीं लग जाती, तब तक मेरी भक्ति के बिना अन्तःकरण कैसे शुद्ध हो सकता है। भक्ति के आवेश में जिसकी वाणी गद्गद् हो गई है, चित्त द्रवित हो गया है, जो कभी रोता है कभी हँसता है कभी संकोच छोड़कर ऊंचे स्वर में गाने लगता है और कभी मस्ती में नाच उठता है ऐसा मेरा भक्त स्वयं भी पवित्र हो फिर तो कहना ही क्या। वह समस्त लोकों को पवित्र कर देता है।

जिस प्रकार अग्नि से तपाए जाने पर सोना मैल को त्याग देता है और पुनः तपाए जाने पर अपने स्वच्छ रूप को प्राप्त हो जाता है, उसी प्रकार आत्मा भी भक्तियोग के द्वारा कर्म वासना से मुक्त होकर फिर मुझ भगवान को प्राप्त हो जाता है।

श्री मद्भागवत के एक अन्य प्रकरण में जगन्नियंता भगवान श्री कृष्ण द्वारा गोपियों को सांत्वना देने हेतु उद्धव को पत्र लेकर उनके पास भेजने का वृतांत है। उद्धव बहु प्रकार से समझाकर उन्हें धैर्य धारण करने का उपदेश देते हैं। किन्तु गोपियों पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा। इसके विपरीत उन्हें उद्धव पर दया आती है। वे तो अपने आपको अपने प्रियतम श्री कृष्ण से एक पल के लिए भी विलग नहीं मानती। उल्टा उन्होंने उद्धव को ही अपने श्रीकृष्ण के प्रति विशुद्ध प्रेम की परिभाषा बतला दी। कवि ने इसे सुन्दरता से अपने शब्दों

में इस प्रकार वर्णित किया है–

श्याम तन है, श्याम मन है,

श्याम है हमारो धन।

आठों पहर ऊधो हमें,

श्याम ही से काम है।

श्याम हिए श्याम जिए,

श्याम ही हमारे लिए,

अन्धे की सी लाकरी,

आधार श्याम नाम है

उधो! तुम भए हो बौरे

पाती लेके आए दौरे,

धैर्य हम राखे कहां,

यहां रोम रोम श्याम है,

रोम रोम श्याम हैं।

गोपियां स्वयं महान योगनियां थीं। भक्तियोग की पराकाष्ठा उनमें थीं। इसी के अन्तर्गत वे हर समय भाव समाधि में रहा करती थीं। उनके मन में प्रतिपल भगवान श्रीकृष्ण के अतिरिक्त अन्य कोई भाव आता ही नहीं था। उनका उठना–बैठना, खाना–पीना, अन्य व्यवहार सब अपने आराध्य के ही निमित्त रहता था। उनकी अनन्य भक्ति व इतनी ऊंची यौगिक अवस्था से उद्धव स्वयं भी प्रभावित हुए बिना नहीं रह सके। उनसे विदा लेते हुए वे स्वयं भी श्रीकृष्ण भक्ति में सराबोर हो चुके थे।

भक्ति के शाँत, दास्य, सख्य, वात्सल्य और माधुर्य–ये पांच भाव हैं। इनमें से कौन भाव श्रेष्ठ है, यह नहीं कहा जा सकता। अपने–अपने क्षेत्र में सभी भाव उत्तम हैं। जिस भक्त को जो भाव प्रिय है उसके लिए वही भाव सर्वोत्तम है। श्री हनुमानजी के लिए दास्य भाव ही सर्वोत्तम है। वे किसी भी दूसरे भाव के लिए क्या इस दास्य भाव का कभी परित्याग कर सके। श्री वसुदेव–देवकी या श्री नन्द–यशोदा के लिए वात्सल्य भाव ही प्रधान है। गोपियां श्रीकृष्ण के लिए माधुर्य भाव से ओतप्रोत हैं। इसी प्रकार से अन्य भाव हैं। भक्त

इनमें से चाहे किसी भाव में डूबा हो, उसे भगवद्प्राप्ति हो जाती है। इसमें अपने आप को खोना पड़ता है, मिटाना पड़ता है। अपने अहं को तिलांजलि देनी पड़ती है।

राजरानी मीरा ने सब लोक लाज छोड़कर अपने आपको पूर्णरूप से कृष्ण प्रेम में रचा–बसा लिया था। यही कारण था कि उसे कई प्रकार की वेदनाएं दी गई, उसके प्राण लेने का यत्न किया गया कभी विष देकर, कभी भयानक सांप भेजकर किन्तु उसके आराध्य देव भगवान श्रीकृष्ण हर बार उसके सहायक रहे। उसे हर समय हर जगह, अपने भीतर बाहर श्रीकृष्ण ही दृष्टिगोचर होते थे। यही नहीं अंतिम समय में उसके आराध्य देवाधिदेव भगवान श्रीकृष्ण ने उसे सशरीर अपने भीतर समाहित कर लिया। उसके निष्प्राण शरीर की जगह लोगों को कुछ पुष्प ही मिले। यह भक्तियोग की पराकाष्ठा थी। भगवान श्रीकृष्ण श्रीमद्‌भगवद्‌गीता के छठे अध्याय के 30 वे श्लोक में स्वयं कहते हैं–

यो मा पश्यति सर्वत्र,

सर्वं चमयि पश्यति,

तस्याहं न प्रणश्यामि,

स च मे न प्रणश्यति।

''जो मुझे सर्वत्र देखता है, सब जगह जिसे मैं ही दीखता हूँ और जिसे सब प्राणियों में मेरे ही दर्शन होते हैं, ऐसा मेरा भक्त जो है उसके लिए मैं क्षणमात्र के लिए भी अदृष्य नहीं होता हूँ और न ही वह कभी मेरी दृष्टि से ओझल होता है।''

यह स्थिति भगवान में अनन्य प्रेम अव्यभिचारिणी भक्ति द्वारा ही आती है। इसके लिए उनके नाम का जप, उनके गुण, प्रभाव, रहस्यतत्व के ज्ञान सहित उनके स्वरूप और लीलाओं का ध्यान आवश्यक है।

जीवन थोड़ा है। नाना प्रकार के विघ्नों से भरा है। जो समय बीत गया, वह तो गया ही, वह वापिस नहीं आएगा। अब शेष बचे जीवन के प्रत्येक क्षण को प्रभु सेवा में, उनके भजन में लगा देने में ही अत्यन्त कठिनता से प्राप्त हुए इस मनुष्य जीवन की सार्थकता है।

कलियुग में भगवत्प्राप्ति के साधन बहुत सुगम हैं। भगवान के नाम संकीर्तन से ही सारा काम बन सकता है। सत्संग मिल जाए फिर तो कहना ही क्या? श्री मद्‌भागवत् में एक स्थान पर उद्‌धृत है–

तुलयाम लवेनापि न स्वर्गं नापुर्नभवम,

भगत्सङ्गिसंङ्गस्य मर्त्यानां किमुताशिषः

"भगवत्सङ्गी अर्थात् नित्य भगवान के प्रेम में निमग्न अनन्य प्रेमी भक्तों के निमेषमात्र के संग के साथ हम स्वर्ग और मोक्ष की भी समानता नहीं कर सकते। फिर मनुष्यों के इच्छित पदार्थों की तो बात ही क्या है!"

कलेर्दोषनिधे राजन्नस्ति ह्येको महान गुणः।

कीर्तनादेव कृष्णस्य मुक्तसंगः परं व्रजेत्।।

कृते यद् ध्यायतो विष्णुं त्रेतायां यजतौ मखेः।

द्वापरे परिचर्यायां कलौ तद्धरिकीर्तनात्।।

"हे राजन्, दोषों के खजाने कलियुग में एक ही यह महान गुण है कि भगवान श्रीकृष्ण के कीर्तन से ही मनुष्य आसक्तिरहित होकर परमात्मा को प्राप्त हो जाता है। सत्ययुग में ध्यानयोग से, त्रेता में बड़े-बड़े यज्ञों से और द्वापर में विधिपूर्वक पूजा अर्चना के द्वारा भगवान की आराधना करने वाले को जो फल मिलता है वही कलियुग में केवल श्रीहरि के नाम संकीर्तन से ही मिल जाता है।"

अतएव भक्ति श्रद्धापूर्वक श्री भगवान के नाम गुणों का जप कीर्तन, महापुरुषों का संग एवं धार्मिक सद्‌ग्रंथों का स्वाध्याय करके मनुष्य जीवन को सफल बनाने की चेष्टा प्राणपण से करना श्रेयस्कर है।

दतिया में सिद्धयोग शिविर

प्रतिवर्ष की भाँति इस वर्ष भी श्री पीताम्बरा पीठ की पवित्र नगरी दतिया में तीन दिवसीय सिद्धयोग शिविर का आयोजन श्रीमहाप्रभु रामलाल एवं योगीराज श्री चन्द्रमोहन जी महाराज की असीम अनुकम्पा से योगी डॉ. दासलाल जी महाराज के सानिध्य में सम्पन्न हुआ। आचार्य जी का 3 दिसम्बर 2016 को आगमन हुआ। निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार प्रातः एक घण्टे ध्यान योग में गुरुभक्त शामिल हुए उसके उपरांत तीनों दिवस श्री मद्भगवत् गीता के 15वें, 16वें, एवं 17 वें अध्याय का पाठ एवं गीता जी पर प्रवचन हुए। आचार्य जी ने पुरुषोत्तमयोग, दैवासुरसम्पद्विभागयोग तथा श्रद्धाप्रय विभाग योग को बहुत ही सुन्दर सरल शब्दों में समझाया तथा तीनों अध्याय के महत्त्व को समझाते हुए अपने अचारण में उतारने पर बल दिया। राजयोग के अष्टांग योग के आठों आयामों की बड़ी ही सरल शब्दों में व्याख्या करते हुए सभी गुरुभक्तों को अपने आचरण में उतारने पर बल दिया। विशेष रूप से जप, ध्यानयोग जिस पर गुरुदेव भी बल दिया करते थे उसी परिपाटी को श्री आचार्य जी आगे बढ़ा रहे हैं। आचार्य जी ने अपने व्याख्यान में जीवन को स्वस्थ एवं सभी रोगों, दुखों से छुटकारा पाने के लिए योग को अपनाना नितान्त आवश्यक बताया है। यदि जीवन का आनन्द पाना है तो सभी को योग अपनाना ही होगा। आचार्य जी ने कहा योग सार्वभौम विद्या है एवं योग ही दिव्य अवनाशी जीवन है। द्वितीय दिवस के व्याख्यान में श्री आचार्य जी ने गुरुदेव, शिष्य एवं गुरुमंत्र पर ऐसा प्रकाश डाला कि समस्त गुरु भक्तों ने स्वयं मुझसे कहा कि आज के व्याख्यान को जिसने आचरण में उतार लिया और उस पर चल पड़े तो जीवन सार्थक हो जावेगा।

आज की युवा पीढ़ी के भटकाव पर भी आचार्य जी ने प्रकाश डाला और माता पिता को अपने बच्चों को अच्छे संस्कार देने को कहा गया। अंबाला से पधारे श्री वीरेन्द्र स्वरूप जी ने प्राणायाम, षटकर्म आदि को बड़े ही सुन्दर ढंग से बताया। वीरेन्द्र स्वरूप जी से आयुर्वेद, होम्योपैथिक का भी बहुत लोगों ने लाभ प्राप्त किया। जीवन तत्व साधन की क्रियाओं को भी विस्तार पूर्वक कराया गया। यह प्रभुजी की ही कृपा है कि इस वर्ष भी गुरु परिवार से नये लोग जुड़े हैं। प्रभु राम लाल संगीत विद्यालय दतिया के छात्र, छात्राओं द्वारा गुरुदेव के सुन्दर भजनों की प्रस्तुती दी गयी। प्रतिदिन गुरुदेव की दिव्य आरती संगीतमय

विद्यालय के छात्र छात्राओं द्वारा की गयी। इस शिविर में गंगापुर सिटी, हरियाणा, दिल्ली, हरिद्वार, सागर, बैतूल से गुरुभक्त शामिल हुए। रामकथा आयोजन समिति की तरफ से पं. मुकेश मूडोतिया ने आचार्य जी का सम्मान किया तथा अगले वर्ष विशाल रामकथा में सम्मिलित होने के लिए आचार्य जी से निवेदन किया।

अंतिम दिन सायंकाल गुरुदेव का विशाल भण्डारा हुआ एवं 800–900 गुरुभक्तों ने गुरुदेव का प्रसाद ग्रहण किया।

सायं 6 बजे योगी डॉ. दासलाल महाराज जी को सभी गुरु भक्तों ने भाव–भीनी विदाई की, साथ ही दतिया के वरिष्ठ गुरुभाई श्री चन्दन सिंह गुर्जर बाबाजी ने समस्त गुरुभाई, बहिन, बाहर से आये गुरुभाई बच्चों को कार्यक्रम में सभी प्रकार से सहयोग देने पर आभार व्यक्त किया तथा अगले वर्ष कार्यक्रम को और भव्यता लाने के लिए कहा गया, समस्त संगीतकारों को भी आभार व्यक्त किया।

श्री आचार्य जी दतिया से ग्वालियर 6 तारीख को रवाना हुये। दो दिवसीय दिव्य सिद्धयोग शिविर का आयोजन प्रदीप त्रिवेदी के निवास पर पुष्कर कालोनी ग्वालियर में किया गया। प्रातः योगासन, गीतापाठ तथा सार प्रवचनों पर प्रकाश डाला। सायं योग पर व्याख्यान श्री आचार्य द्वारा दिये गये। एक दिन दंदरौआ सरकार के संत श्री 108 रामदास जी महाराज योग शिविर में पधारे एवं भक्तों को जीवन पथ पर चलने का रास्ता बताया। योग शिविर में काफी संख्या में गुरु भक्त उपस्थित हुए। श्री आचार्य जी ने जीवन के समस्त रोगों, दुखों से छुटकारा पाने के लिए योग पर बल दिया और कहा कि यदि जीवन में आनन्द की प्राप्ति चाहिए तो योग को अपनाना होगा। 9 दिसम्बर को योगी श्री दास लाल जी महाराज को प्रातः भावभीनी विदाई दी गयी।

जय गुरु देव

ॐ श्री राम लाल प्रभवे नमः

अनिकेत स्थिरमति

—कृष्ण कुमार, प्रवक्ता, गोरखपुर बी—20, सूरजकुण्ड

गीता के बारहवें अध्याय में भगवान ने भक्ति का विस्तृत वर्णन किया है। यह सांसारिक जीवों के कल्याण हेतु कहा गया है। भक्ति को योग से जोड़कर उसका नाम भक्तियोग दिया गया है। भक्ति और योग को थोड़ा सा समझना होगा। भक्ति कर्म करते हुए पूरी तरह से ईश्वर के प्रति समर्पण की वृत्ति है। जिसमें साधक का प्रत्येक कार्य ईश्वर के प्रति किया जा रहा है, ऐसा मानना है। हे प्रभु आप ही जानें क्या जीव से ऐसा इस कलिकाल में सम्भव हो सकता है। साधक में अहंता की भावना न बने। कन्हैया की वाणी पर सर्वस्व न्योछावर हो ऐसी सद्बुद्धि बने। गुरुदेव तो पूरी तरह से तत्पर हैं। अकारण साधक को आकर्षित कर लेते हैं तो साधक को भी पूरी तरह से उनके चरणों का शरण ग्रहण करके रहना चाहिए। एक दृष्टान्त से बात स्पष्ट करने का प्रयास जिसके प्रेरक सद्गुरुदेव भगवान। हमारा तो कुछ नहीं शायद यह सटीक भी न हो। फिर भी जी नहीं मानता लिखना पड़ रहा है। कबीर तो पूरी तरह से इस दृष्टान्त से सहमत हैं। उन्होंने कहा है कि—

कबीर कुत्ता राम का मोतिया मेरा नाउँ।
गले राम की जेवड़ी, जित खिचे तित जाउँ।।

कबीर कहते हैं कि मैं राम का कुत्ता (दास) हूँ। मेरा नाम मोती है मेरे गले में राम के प्रेम रूपी रस्सी पड़ी हुई है। वह जिधर खींचते हैं उधर जाता हूँ अर्थात् मैंने पूर्णरूप से उनके प्रति समर्पण कर दिया है और जैसी उनकी इच्छा होती है वैसा ही करता हूँ।

सामान्य व्यवहार में भी कुत्ता मालिक का वफादार जीव माना गया है। धीरे—धीरे वह अपने स्वामी के आहार व्यवहार से परिचित हो जाता है। वह अपने मालिक के दिये गये सीख के अनुसार सारा कार्य करता है। उसके पैर पर लोटता है। उसके ऊपर चढ़ने का प्रयास करता है। बार—बार दुत्तकारने पर भी बगल में ही बैठता है। मालिक उसके पीठ को थपथपाता है। वह समझ जाता है। शान्त होकर बैठ जाता है। रात भर रखवाली करता है। बाहर पड़े हुए सामान को मुँह में दबाकर अन्दर कर देता है। यह उसकी अपने मालिक के

प्रति भक्ति है। भक्ति भी पूरी तरह समर्पित दिखती है। इसी तरह से अन्य जीव इस दृश्य जगत में हैं। जो अपने स्वामी के प्रति पूरी तरह से एक सच्चे भक्त की तरह से न्योछावर रहते हैं। एक बार एक गुरुभाई के यहाँ आवश्यक कार्य वश जाने का मौका मिला। हम (लेखक) एवं गुरुभाई छत पर बैठकर भोजन कर रहे थे। क्योंकि जाड़े का मौसम था। धूप अच्छी लग रही थी। हमने देखा कई गौरैया आकर भाईजी की थाली में खाने लगी। मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ कि किस प्रकार से थाली के किनारे बैठकर वह भात खा रही थीं। मेरे थाली के पास आयी तो मैंने थोड़ा सा भात उन सबके सामने डाल दिया। वे उसको सफाचट कर गयीं। पुनः उड़ गयीं। मैं मन ही मन उस गुरुभाई के परिवार तथा उनके ऐसे जीवों के प्रति प्रेम कहा जाए या और क्या कहूँ यह पाठक पर छोड़ता हूँ। मैंने पूछा–भाईजी क्या यह नित्य आती हैं। उन्होंने मुस्कुराते हुए कहा–भईया इन लोगों के लिए नित्य चावल बनता है। ये प्रेम से दिये गये भात को चाहे हमारे थाली या बच्चों की थाली या दोनों से खा जाती हैं। मुझे अपने पर विचार आया कि क्या मैं भी ऐसा कर सकता हूँ।

भगवान पतंजलि ने एक सूत्र दिया है अपने दर्शन में कि–''अहिंसा प्रतिष्ठायां तत्सन्निधौ वैरत्यागः'' अर्थात् अहिंसा की दृढ़ स्थिति हो जाने पर उस व्यक्ति के निकट सब प्राणी बैर का त्याग कर देते हैं। तुलसी बाबा ने भी कहा है कि–

खगमृग विपुल कोलाहल करही।
विरहित बैर मुदित मन चरही।।

अर्थात् वाल्मीक के आश्रम में बहुत से पक्षी और वनचर जीव कोलाहल कर रहे हैं वे अपने बैर को त्यागकर प्रसन्न मन से इधर–उधर विचरण कर रहे हैं। किसी अन्य को अपने विपरीत जीव से कोई भय नहीं है। आधुनिक कवियों ने कुछ ऐसा ही वर्णन अपने काव्यों में किया है। विस्तार भय से संकेत करना उचित होगा। इसी प्रकार चित्रकूट प्रसंग में भी है–

यरु विहाई चरहि एक संगा। जहँ–तहँ मनहुँ सेन चतुरंगा। भगवान राम चित्रकूट में रहकर भ्रमण कर रहे हैं। वहाँ उस वन प्रान्त में मुनियों के बहुत से निवास स्थान हैं। जहाँ समस्त जीव अपने बैर भाव को त्यागकर विचरण कर रहे हैं। जैसे मानों उन मुनियों की ये जीव ही चतुरंगिणी सेना हो। पुनश्च भगवान ने गीता में कहा कि–

तुल्यनिन्दा स्तुतिर्मौनी सन्तुष्टो येन केनचित्।
अनिकेतः स्थिरमति भक्तिमान्मे प्रियो नरः।।

अर्थात् जो निन्दा तथा स्तुति दोनों को समान समझ रहा है। मनन शील है। शरीर का जैसे–तैसे ईश्वर की कृपा से किसी प्रकार से भी निर्वाह होता जा रहा है। उसी में पूर्ण सन्तुष्टि मिलती जा रही है। रहने के स्थान में भी अर्थात् घर के प्रति भी किसी प्रकार की कोई ममता और आसक्ति नहीं है। बुद्धि भगवान के प्रति लगी हुई तथा उन्हीं के चरणों में पूरी तरह समर्पित है। ऐसे भक्त भगवान को प्रिय हैं। यही यथार्थ भक्ति है। इसी प्रकार नित्य नियम बनाकर जुड़ जाना योग हो जायेगा। इसी को भक्ति का योग अर्थात् मेल या समाधि की ओर बढ़ना है।

जब तक साधक का कहीं भी किसी प्रकार से किसी में लगाव होगा। उसमें अहंकार एवं राग की वृत्ति बनी रहेगी तो निश्चय ही भक्ति निश्छल एवं समर्पित नहीं हो सकती है। इसलिए साधक को समर्पण की वृत्ति को जानने के लिए बारहवाँ अध्याय पढ़ना तथा सद्गुरुदेव के बताये गये सदुपदेशों का नित्य निरन्तर चिन्तन ही श्रेयस्कर होगा।

हे कलिकाल तुम्हारा प्रवेश कहाँ नहीं है। लेकिन साधकों सावधान इस कलिकाल में भी गुप्त साधक हैं। जिन्हें शायद पहचाना न जा सके। ऐसे समर्पित लोग हैं जैसा कि गौरैयों का थाली में खाना। ऐसे लोगों के आचरण और प्रवृत्ति से सीखने की आवश्यकता है। मात्र लेखनी से कार्य तो नहीं होगा। कार्य एवं व्यवहार रूप में इसे लाने की आवश्यकता है। निश्चय ही सुख एवं शान्ति मिलेगी। अशान्ति हम साधकों के मन में है तो शान्ति कहाँ से आयेगी। इसलिए अपने को अनिकेत और दृढ़ मति वाला समझना होगा। सद्गुरुदेव के माध्यम से स्व को जानना होगा। तब शायद भगवान के वचनों को समझा जा सकता है। कलिकाल के जीवों की गति को जानकर महाराज भर्तृहरि ने अपने अनुभव को शृंगारशतक में व्यक्त करते हुए कहा है कि–

मत्तेभकुम्भदलने भुवि सन्ति शूराः।

केचित्प्रचण्डभृंगराजवधेऽपि दक्षः।।

किन्तु ब्रवीमिबलिनां पुरतः प्रसह्य।

कन्दर्पदर्पदलेन विरला मनुष्याः।।

अर्थात् कुछ वीर ऐसे हैं जो मदमत्त गजराज को मारने में पूरी तरह से सिद्धहस्त हैं। तो कुछ ऐसे भी हैं जो सिंह को मारने में परन्तु मैं दृढ़ता पूर्वक कह सकता हूँ कि कामदेव के घमण्ड को खण्डित करने वाला वीर शायद ही कोई होगा। अन्त में यही कहना पड़ रहा

है कि जिसको योगेश्वर भगवान श्रीकृष्ण ने बारहवें अध्याय में कहा है–

अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च।
निर्ममो निरहंकार समदु:ख सुखः क्षमी।।
सन्तुष्टः सततं योगी यतात्मा दृढ़ निश्चयः।
मय्यर्पित मनोबुद्धिर्योमद्भक्तः स मे प्रियः।।

हे प्रभो ऐसी सद्बुद्धि सद्‌गुरुदेव के माध्यम से बनाओ। क्योंकि जब आपके बिना कोई पत्ता तक नहीं हिलता तो कलियुगी जीव तो अपने कर्मों के अधीन हो जीवनयापन में येनकेन प्रकारेण लगे हैं। उनकी गति मति आपके अलावा और कोई हो ही नहीं सकता है। अपने शरण में लो गिरधारी, हम तो बजावे खाली तारी। इससे अनिकेत और स्थिर मति शायद बन जाये।

संकलन

–आचार्य ब्रह्मचारी बृजमोहन वशिष्ट जी

ध्यान से आत्म–परमात्मा दर्शन
ध्यानात्यापानि नश्यन्ति ध्यानान्मोक्ष च विन्दति
ध्यानां त्प्रसीदति हरि ध्यानत्सर्वोतम

अर्थात–ध्यान से पाप नष्ट होते हैं। ध्यान से मोक्ष मिलता है। ध्यान से भगवान प्रसन्न होते हैं।

ध्यान से सब मनोरथों की सिद्धि होती है।

ध्यानेन आत्मानं पश्यन्ति

ध्यान के बिना आत्म दर्शन नहीं होते।

प्रयागराज का वार्षिक माघ मेला सम्पन्न

इस वर्ष 12 जनवरी से 10 फरवरी माघी पूर्णिमा तक प्रयागराज में माघ मेला का आयोजन किया गया। प्रयाग में श्री गुरुदेव भगवान के समय से ही मेला प्रतिवर्ष लग रहा है। श्री गुरुदेव के बनवाये हुए बिस्तर, कम्बल आदि उसी प्रकार से रख–रखाव के साथ श्री भाई विनय मालवीय जी के यहाँ सुरक्षित रखे जाते हैं। मेला का मुख्य पर्व मौनी अमावस्या का था जो 27 जनवरी का था। इसमें उत्तर भारत के 70–80 लाख श्रद्धालुओं ने पवित्र संगम पर या अन्य घाटों पर स्नान किया। इसमें सम्मिलित होने वालों में मण्डी हिमाचल से रमेश कुमार मेहता, ज्ञान चन्द्र शर्मा आदि दूर–दूर के साधक थे। जयपुर से **श्री मनोहर तिवारी** भी एक बस लेकर आये थे। अन्य सभी मण्डलों के सदस्य 400–500 कैम्प में पहुँच गये थे। सारी व्यवस्था वहाँ के कमेटी के सदस्यों द्वारा की गई थी। जिसमें अध्यक्ष विनय मालवीय जी, तथा रामवृक्ष यादव, श्री दशरथ त्रिपाठी चन्द्रवली दूधनाथ जी, अनिल कुमार सिंह (कुँवर) बुलन्दशहर से अनिल शर्मा तथा आगरा के योगेश शर्मा आदि प्रमुख रहे।

प्रतिदिन गीता के दो अध्यायों का पाठ आचार्य श्री दासलाल जी के द्वारा कराया जाता रहा और उनका सार भी समझाया गया। श्री धर्मेन्द्र व्यास की भी भागवत कथा आयोजित थी। मौनी अमावस्या को कथा सम्पन्न हुई। इस प्रकार से यह वार्षिक उत्सव बड़े ही सौहार्द वातावरण में सम्पन्न हुआ। श्री दशरथ तिवारी, चन्द्रवली, रामवृक्ष जी, सुरेश चन्द्र खरे आदि गुरुभक्तों की सेवा अत्यधिक सराहनीय रही।

सिद्धयोग आश्रम गंगापुर सिटी में विशाल योग शिविर

प्रतिवर्ष की भाँति इस वर्ष भी महाप्रभु श्री रामलाल जी महाराज एवं योगीराज अनंत श्री चन्द्रमोहन जी महाराज की असीम अनुकम्पा से सिद्धयोग आश्रम गंगापुर सिटी में विशाल दिव्य योग शिविर 28 दिसम्बर से 1 जनवरी 2017 तक पाँच दिवसीय आचार्य डॉ. दास लाल जी महाराज के परम सानिध्य में उल्लास पूर्वक व बड़ी धूमधाम से मनाया गया। इस शिविर की विशेषता यह रही कि सैकड़ों की संख्या में स्थानीय लोगों के अलावा सुदूर क्षेत्रों से हिमाचल प्रदेश, मण्डी, उत्तर प्रदेश, वाराणसी, इलाहाबाद, दिल्ली, हरियाणा, चण्डीगढ़, बिहार, मध्य प्रदेश, राजस्थान आदि क्षेत्रों से आये गुरुभक्तों ने इस शिविर में बढ़ चढ़ कर भाग लिया। इन सभी की उपस्थिति एवं सहयोग से यह कार्यक्रम अदि सुन्दर एवं दिव्य बन गया।

निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार प्रातः 5 बजे आरती, ध्यानाभ्यास से प्रारम्भ होता था आचार्य जी प्रभु दरबार में उपस्थित सैकड़ों लोगों को स्वयं ध्यान में बैठाते थे, तथा उसके उपरांत जीवन तत्व साधन की क्रियायें, प्राणायाम, योगासन अपने संरक्षण में कराते थे। आनन्द विभोर होकर साधक ध्यानयोग का आनन्द लेते थे।

प्रातः 9 बजे से 11 बजे तक गीता पाठ एवं गीताजी पर प्रवचन हुआ करते थे। आचार्य जी गीता पाठ करते व सभी साधकों से भी करवाते थे। श्री मद्‌भगवत गीता के सम्पूर्ण 18 अध्यायों का पाठ कराया गया। आचार्य जी ने एक एक श्लोक का गहराई से व उसमें छिपे रहस्यों को बड़े ही सरल शब्दों में समझाया। सायंकाल 4 से 7 बजे तक भजन एवं संकीर्तन का रहता था। स्थानीय भजन गायकों के अलावा बनारस, हरियाणा की मण्डलियों ने गुरुदेव के सुन्दर–सुन्दर भावपूर्ण भजनो को सुनाया। संकीर्तन एवं श्री प्रभुजी की दिव्य आरती के दौरान साधकों को ध्यानस्थ होते देखा गया। गंगापुर सिटी की बालिका ने मधुर स्वर में शास्त्रीय संगीत की प्रस्तुती दी जो बहुत ही कर्ण प्रिय थी।

दिव्य आरती के उपरांत श्री आचार्य जी का योग सिद्धान्तों पर प्रवचन होता था। आचार्य जी ने योग सिद्धान्तों के साथ–साथ श्री मद्‌भगवत गीता के गूढ़ रहस्यों को इतने

सरल शब्दों में व्याख्या करके समझाया कि अज्ञानी से अज्ञानी व्यक्ति भी उनके व्याख्यानों को समझ सकता है। यही एक कला कि योग सिद्धान्तों के श्लोकों का सरलीकरण करके भक्त के जीवन दर्शन में उतार देना।

महर्षि पतंजलि के अष्टांग योग के बारे में विस्तार से चर्चा की इसके विभिन्न अंगों में से श्री आचार्य जी ने ध्यान योग को बहुत महत्त्व दिया उन्होंने स्पष्टता से कहा कि चाहे जितनी विपत्ति आ जाये, पापों का पहाड़ ही सम्मुख क्यों न हो ध्यान योग की साधना करने वाले के वह सारे नष्ट हो जाया करते हैं। आचार्य जी ने बार–बार सचेत किया कि जब तक शरीर स्वस्थ्य है तब तक ध्यान अभ्यास एवं योग साधना डट कर करना चाहिए। गुरू आज्ञानुसार प्रातः 5 से 7 बजे तक गुरू मंत्र जाप, ध्यान करना चाहिए इसी से हमारे सभी कष्टों का निवारण हो जायेगा।

31 दिसम्बर 2016 को आचार्य डॉ. दासलाल जी महाराज के निर्देशन में प्रातः 10 बजे विशाल शोभायात्रा ढोल, नगाड़े, बैन्डबाजों के साथ नगर के मुख्य मार्गों से निकाली गयी। शोभायात्रा में हजारों की संख्या में लोग शामिल हुयें सैकड़ों जगह आचार्य जी का स्वागत वंदन हुआ। गुरु देव जय जय सतगुरू जय जय अखण्ड जयोति प्रभु राम लाल जय जय, योग को अपनाओगे दिव्य जीवन पाओगे संकीर्तन से सारा शहर मद मस्त होते देखा गया। 4 घण्टे बाद शोभा यात्रा वापस आश्रम पहुँची रात्रि 31 दिसम्बर का क्या कहना वर्णन ही नहीं हमारे परम श्रद्धेय आचार्य जी का जन्मोत्सव मनाया गया पंडाल, गुब्बारों, फूलों, पताकाओं से सजाया गया था, प्रभुजी की दिव्य आरती के उपरांत विशाल मावे से बना केक का भोग लगाया गया सभी को केक का प्रसाद आचार्य जी द्वारा बाँटा गया एवं नववर्ष पर सभी को आचार्य जी ने आशीर्वाद प्रदान किया। 1 जनवरी को विशाल भण्डारे का आयोजन था जिसमें हजारों की संख्या में व्यक्तियों ने श्री प्रभुजी का प्रसाद ग्रहण किया। गंगापुर सिटी के आश्रम के सभी सदस्यों ने मिलजुल कर उत्तम व्यवस्था की थी जो काफी सराहनीय है। 2 जनवरी को आचार्य जी को भावभीनी विदाई देकर सभी गुरू भक्त अपने–अपने स्थान घर वापस चले गये।

॥ जय गुरु देव ॥

"प्रशंसा और निन्दा" दोनों से बचना अच्छा है।

—दिनेश चन्द्र शर्मा मो. 9412671314

प्रशंसा सुनकर प्रसन्न होना मनुष्य का सहज स्वभाव है। प्रशंसा से प्रसन्न होना और अपने आप को उस सराहना के योग्य मान लेना अनर्थ की जड़ है। इससे मन में अहंकार उत्पन्न होता है। निन्दा सुनकर प्रायः लोग दुःखी हो जाते हैं और अपने मन में क्षोभ का अनुभव करते हैं। इसके फलस्वरूप निन्दक के प्रति द्वेष और हिंसा का भाव पनपता है। प्रशंसकों के प्रति राग और निन्दकों के प्रति द्वेष हो जाता है। मन में राग–द्वेष का उदय योग के मार्ग में बाधक होता है। गुरुदेव योगेश्वर श्री चन्द्र मोहन जी महाराज साधकों को प्रायः सचेत करते रहते थे कि दूसरों की किसी भी प्रकार निन्दा, चुगली आदि से दूर रहना चाहिए।

राग–द्वेष मन की एकाग्रता नष्ट करते हैं। मन कमजोर पड़ जाता है। मन की संकल्प शक्ति क्षीण हो जाती है। महापुरुषों ने मानवोचित दया भाव का जो मार्ग निर्धारित किया है, राग–द्वेष उससे विमुख करते हैं। राग–द्वेष से बचने के लिए यह आवश्यक है कि प्रशंसा और निन्दा को समभाव से ग्रहण करने की शक्ति विकसित की जाये। दोनों से मन में उद्वेलन होता है, दोनों मन को क्षुब्ध करते हैं। इसलिए प्रशंसा सुनकर प्रसन्न होना और निन्दा सुनकर दुःख करना उचित नहीं है। महात्मागण इसी कारण मान और अपमान दोनों की उपेक्षा करते हैं।

व्यवहार में इसे दूसरे रूप में लिया जा सकता है। प्रशंसा सुनकर उसके अनुरूप अपने चरित्र को ढालो। निन्दा सुनकर निन्दा के मूल कारणों पर विचार करो और उस दोष से बचो और सुधार करो। इस प्रकार प्रशंसा प्रतिभा एवं तेज की समृद्धि करेगी और निन्दा चरित्र. को सम्बलित करेगी। इसके लिए भी निरन्तर अभ्यास की आवश्यकता है। यह समभाव सहज प्राप्त नहीं होता है। इसके लिए तप करना पड़ता है।

भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है—

निर्मान मोहा जित संग दोषा
अध्यात्म नित्या विनिवृत्त कामाः।

द्वन्द्वै र्विमुक्ता सुख दु:ख संज्ञै
गच्छन्त्य मूढा: पदम व्ययं तत्।।

(गीता अध्याय 15 श्लोक 5)

जिसका मान और मोह नष्ट हो गया है। जिनकी परमात्मा के स्वरूप में नित्य स्थिति है, जो सम्पूर्ण कामनाओं से रहित हो गये हैं, जो सुख दु:ख नाम वाले द्वन्द्वों से विमुक्त ज्ञानी जन उस अविनाशी परमपद को प्राप्त होते हैं, जो ऊँची स्थिति के साधक मान, मोह, ममता आदि दोषों से सर्वथा रहित हो जाते हैं, वे उस अविनाशी परमपद को अवश्य प्राप्त होते हैं।

महात्मा–योगीजन साधकों को प्राय: उपदेश दिया करते हैं कि किसी की अकारण निन्दा मत करो, प्रशंसा भी नहीं करो। केवल किसी को प्रसन्न करने के लिए उसकी सराहना और दु:खी करने के लिए उसकी निन्दा करना, शील के विरुद्ध है। इससे उसके विनाश की भूमिका तैयार होती है और अपना पतन भी होता है।

जो अकारण किसी की निन्दा करता रहता है, वह भ्रमित है। ऐसे मनुष्य संसार में होते हैं जिनके लिए कुछ भी कह देना और कुछ भी कर देना सहज ही सम्भव है। ऐसे लोग विश्वास के पात्र नहीं होते और ऐसे लम्पट लोगों से मेल–जोल तो दूर, बातचीत का सम्बन्ध भी नहीं रखना चाहिए।

आज कल तो ऐसे लोगों की भरमार हो गयी है, जो सामने तो प्रशंसा करते थकते नहीं किन्तु पीठ पीछे निन्दा करते हैं। जो सामने तो गुणगान और परोक्ष में निन्दा करे, वह कुक्कुर के समान होता है, ऐसे की संगति से बचना चाहिए।

महाभारत में भीष्मपितामह ने युधिष्ठिर को समझते हुए कहा है—जो निन्दा करने वाले के ऊपर क्रोध नहीं करता, वह उस निंदक के पुण्य को ले लेता है और अपने पाप धो डालता है। इसी प्रकार निन्दा करने वाला व्यक्ति अपने पुण्य का क्षय करता है और जिसकी निन्दा करता है, उसका छठा भाग पाप ग्रहण कर लेता है। व्यास जी महाराज ने महाभारत में स्पष्ट कहा है कि ''जो दूसरों की निन्दा और प्रंशसा से दूर रहता है उसकी मुक्ति हो जाती है।

साधक को वाणी–पर संयम रखना चाहिए। कहा जाता है कि ''पहले तोलों, फिर बोलो'' अर्थात् सोच समझकर ही बोलना चाहिए। बिना सोचे–समझे निरर्थक बोलना और निन्दा करने से बचना चाहिए।

सूचना

(1) सभी सिद्धयोग के ग्राहकों को सूचित किया जाता है कि मार्च के अंक के साथ ही वार्षिक सदस्यों का शुल्क समाप्त हो जाता है। अत: नये वर्ष का शुल्क सिद्धयोग कार्यालय में अविलम्ब जमा कर दें। शुल्क 180 रु. ही रखा गया है।

(2) सभी मनीषी लेखकों से निवेदन है कि योग परक लेख, गुरु भक्ति के तथा अध्यात्मक लेख भेज कर हमारा सहयोग करें। यह लेखकों की उत्कृष्ट गुरु सेवा है अत: उच्च कोटि के लेख भेज कर हमें अनुग्रहित करें।

—व्यवस्थापक

सिद्धयोग

शोक संवेदना

(1) बड़े दु:ख का विषय है कि दतिया (म.प्र.) निवासी हमारे गुरु भाई श्री राजेन्द्र भारती पूर्व–विधायक की माँ का 9 फरवरी को देहान्त हो गया है। वे 85–86 वर्ष की थीं। प्रभु जी उन्हें अपने चरणों में जगह दें।

(2) इसी परिवार में ही विपिन चौरसिया डिप्टी कलेक्टर (रिटा.) की धर्मपत्नी का 16 फरवरी को देहान्त हो गया है। उनके पुत्र चि. निखिल आदि हैं। परिवार में एक साथ दो सदस्यों के निधन से दु:खी परिवार के सदस्य राजेन्द्र भारती, विपिन चौरसिया तथा अन्य सभी दु:खीजनों को इस दु:ख को सहन करने की प्रभु जी शक्ति दें और दिवंगत आत्माओं को शान्ति प्रदान करें। सिद्धयोग परिवार अपनी हार्दिक संवेदना व्यक्त करता है।

सम्पादक

सिद्धयोग मासिक

श्री रामलाल प्रभवे नमः 卐 *श्री सद् गुरु परब्रह्मणे नमः*

आनन्दकन्द महाप्रभु श्री रामलाल जी महाराज का 129 वाँ

पावन प्राकट्य दिवस

यह सूचित करते हुए अत्यन्त हर्ष हो रहा है कि आनन्दकन्द महाप्रभु श्री रामलाल जी महाराज का 129 वाँ पावन प्राकट्य दिवस श्री राम नवमी योग महामेला के रूप में 3, 4, एवं 5 अप्रैल को बड़े ही हर्ष व उल्लास के साथ श्री सिद्ध गुफा सवाँई धाम में मनाया जा रहा है। इस उपलक्ष्य में 29 मार्च से 4 अप्रैल 2017 तक श्री मद्‌भागवत महापुराण की कथा भी होगी। कथा व्यास श्री पुरुषोत्तम शरण वृन्दावन (करौली) वाले होंगे। सभी गुरु भक्तों से निवेदन है कि उक्त कार्यक्रम में आकर योग सिद्धान्तों का श्रवण तथा रसमयी कथा का आनन्द लें। 5 अप्रैल को श्री राम नवमी महोत्सव का भण्डारा रहेगा।

जय गुरुदेव जी की।

श्रद्धावनत

आचार्य डॉ. दासलाल

व्यवस्थापक

श्री सिद्ध गुफा सवांईधाम

पो. एत्मादपुर

जिला–आगरा

स्वास्थ्य

योग-आसन

उत्कटासन

विधि

महर्षि घेरण्ड जी ने उत्कटासन की विधि इस प्रकार बताई है।

अंगुष्ठाभ्याधरामवष्टभ्य गुल्फे च खे गतौ।
तत्रोपरि गुदं न्यस्य विजये मुत्काटासनम्।।

अर्थात् दोनों पैरों के अँगूठों पर सारे शरीर का भार रहे व एड़ियाँ ऊपर को उठी हुई उन एड़ियों पर नितम्ब रख कर बैठें। इसे उत्कटासन कहते हैं।

आजकल प्रचारित विधि– आजकल इस आसन का जो प्रचारित ढंग है उसमें इस आसन से एक प्रकार की कुर्सी पर बैठने की नकल है। उसमें भी पैरों के अग्रभाग पर (अर्थात् पैरों के पंजों पर) सारे शरीर का वजन आ जाए व दो एड़ियाँ ऊपर को उठी हुई हों व दोनों हाथ अर्ध चन्द्राकार विधि से कटि प्रदेश में लगे हुए हों, सामने आकाश की ओर ऊर्ध्व दृष्टि होकर देखता रहे, घुटने व पिण्डलियाँ आगे की ओर झुकें न हों इसी को उत्कटासन कहते हैं।

उत्कटासन

फल

इस आसन के करने से मल विसर्जन ठीक होता है। मलाशय शुद्ध हो जाता है। पिंडलियों को बल देता है। नेत्र दृष्टि के लिए लाभप्रद है। अपान वायु का ऊर्ध्वाकर्षण करता है। इसलिए जल बस्ती करने वाले लोग इसी उत्कटासन के बल से खड़े होकर मलाशय की शुद्धि के लिए नौली ढंग से नले उठा कर जल खींचते है। अतः पुरुषोत्सर्ग के लिए यह आसन परमोत्कृष्ट है।

●●●

सिद्धयोग मासिका (पत्रिका) का विवरण
फार्म नं. 4

1. प्रकाशन का स्थान	—	श्री सिद्धगुफा, संवाई (एत्मादपुर) आगरा (उ.प्र.)
2. प्रकाशन का अवधि क्रम	—	मासिक
3. मुद्रक का नाम	—	दासलाल शर्मा
राष्ट्रीयता	—	भारतीय
पता	—	श्री सिद्धगुफा संवाई, आगरा (उ.प्र.)
4. प्रकाशक का नाम	—	दासलाल शर्मा
राष्ट्रीयता	—	भारतीय
पता	—	श्री सिद्धगुफा संवाई, आगरा (उ.प्र.)
5. सम्पादक का नाम	—	दासलाल शर्मा
6. स्वत्वाधिकारी	—	दासलाल शर्मा

मैं दासलाल शर्मा एतद् द्वारा यह घोषित करता हूँ कि उपर्युक्त विवरण मेरी अधिकतम जानकारी और विश्वास के अनुसार सत्य है।

30 जनवरी 2017

दासलाल शर्मा
कृते, सिद्धगुफा प्रकाशन, संवाई (एत्मादपुर), आगरा

महादेवस्ततः स्मृतः

एकान्ते मधुमांसे च नवश्राद्धे तथैव च।
प्रत्यक्षलवणे चोक्तं प्राजापत्यं विशोधनम्।।
ध्याननिष्ठस्य सततं नश्यते सर्वपातकम्।
तस्मान्महेश्वरं ज्ञात्वा तस्य ध्यानपरो भवेत्।।
यद् ब्रह्म परमं ज्योतिः प्रतिष्ठाक्षरमद्वयम्।
योऽन्तरात्र परं ब्रह्म स विज्ञेयो महेश्वरः।।
एव देवो महादेवः केवल परमः शिवः।
तदेवाक्षरमद्वैतं तदादित्यान्तरं परम्।।
यस्मान्महीयते देवः स्वधाम्नि ज्ञानसंज्ञिते।
आत्मयोगाह्वये तत्त्वे महादेवस्ततः स्मृतः।।

एकका ही अन्न भक्षण करने, मधु ग्रहण करने, नव श्राद्ध सम्बन्धी अन्न तथा प्रत्यक्ष लवण खाने पर प्राजापत्यव्रत को (पाप की) शुद्धि का उपाय बतलाया गया है। निरन्तर ध्याननिष्ठ पुरुष के सभी पातक नष्ट हो जाते हैं, इसलिये महेश्वर का ज्ञान प्राप्त कर इनके ध्यान में परायण रहना चाहिए। जो ब्रह्म परम ज्योति रूप, सभी का अधिष्ठान, अक्षर अद्वितीय है तथा जो सभी के भीतर स्थित है, परम ब्रह्म है, उसे महेश्वर जानना चाहिये। ये ही महेश्वर देव, महादेव एवं अद्वितीय परम शिव हैं। ये ही अविनाशी, अद्वित हैं और ये ही आदित्य के भीतर प्रतिष्ठित परम (तत्त्व) हैं। आत्मयोग नाम से प्रसिद्ध, स्वप्रकाश, नित्य–ज्ञान नाम से भी विख्यात, परम तत्त्वरूप अपने धाम में सर्वाधिक पूजनीय–रूप से ये महेश्वर प्रतिष्ठित हैं, इसीलिय महादेव कहे गये हैं।

◆ ◆ ◆

SIDDHYOG Postal Regd. No.: Ag. 19/15-17 FEB-MARC

सिद्धयोग

योग सिद्धान्तों का प्रतिपादक
उच्चकोटि का हिन्दी मासिक

श्री सिद्धगुफा योग प्रशिक्षण केन्द्र
सँवाई (एत्मादपुर) आगरा (उ.प्र.)

BOOK-POST

श्री/सुश्री ____________________

____

____

□□□□□□

ब्रह्म ही प्रभु है

ब्रह्म प्रभुर्ब्रह्म स सर्वभूतो ब्रह्म प्रजानां पतिरच्युतोऽसौ।
ब्रह्माव्ययं नित्यमजं स विष्णुरपक्षयाद्यैरखिलैरसङ्गि।।

–विष्णु पुराण 1/15–57

ब्रह्म ही प्रभु है, ब्रह्म ही सर्वजीव रूप है और ब्रह्म ही सकल प्रजा का पति (रक्षक) तथा अविनाशी है। वह ब्रह्म अव्यय, नित्य और अजन्मा है तथा वही क्षय आदि समस्त विकारों से शून्य विष्णु है।

संस्थापक – योगयोगेश्वर अनन्तश्री चन्द्रमोहन जी महाराज। मुद्रक एवं प्रकाशक डॉ. दासलाल शर्मा के
राष्ट्रीय ब्लॉक एवं प्रिंटिंग वर्क्स, आगरा–3 से मुद्रित एवं श्री योग प्रशिक्षण केन्द्र, सवाई (एत्मादपुर) आगरा
प्रकाशित। आर.एन.आई. नं. UPHIN/2004/14566 सम्पादक : आचार्य ब. (डॉ.) दासलाल